अंकलीकर आदि ज्योति

संकलनकर्ता
ताराचन्द पाटनी
जयपुर

प्रकाशक
श्री १०८ सन्मति सागर चातुर्मास व्यवस्था समिति जयपुर

द्रव्यदाता
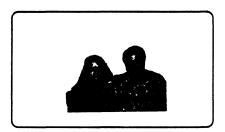
श्रीमती पद्मादेवी बगड़ा एव श्री सुभाषजी बगड़ा (सुजानगढ़)

श्री बाबूलाल जी जैन एवं श्रीमती इन्द्रादेवी जैन

श्री १०८ सन्मति सागर महाराज चातुर्मास व्यवस्था समिति के पदाधिकारी

श्री पदमचन्द खिलौनेवाले	अध्यक्ष
श्री देवप्रकाश खंडाका	कार्याध्यक्ष
श्री ताराचन्द पाटनी	कार्याध्यक्ष
श्री पदम कुमार सेठी	कार्याध्यक्ष
श्री माणकचन्द जैन	महामंत्री
श्री पदमचन्द निमोड़िया	मंत्री
श्री शान्ति कुमार गंगवाल	संयुक्त मंत्री
श्री चन्द्रभान भौंच	कोषाध्यक्ष
श्री विमल कुमार जैन	कोषाध्यक्ष
डा. सनत कुमार जैन	कार्यक्रम संचालक
श्री संत कुमार खण्डाका	कार्यक्रम संयोजक
श्री राजमल बेगस्या	सांस्कृतिक संयोजक
श्री पदम शाह पत्रकार	प्रचार मंत्री
श्री ब्र. मोतीलाल जी हाड़ा	वैयावृत्ति संयोजक
श्री महेन्द्र कुमार शाह	वैयावृत्ति संयोजक

प्रकाशकीय

राजस्थान की राजधानी जयपुर नगर के निवासियों का परम सौभाग्य है कि परम पूज्य श्री १०८ आचार्य समाधि सम्राट मुनि कुञ्जर आदिसागर जी महाराज के तृतीय पट्टाधीश सिद्धान्त चक्रवर्ती तपस्वी सम्राट श्री १०८ आचार्य सन्मति सागर जी महाराज एव परम विदुषी प्रथम गणिनी आर्यिका रत्न १०५ श्री विजयमती माताजी ससघ का दर्शन एव चातुर्मास करने का परम सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। आपके सघ का मगल पदार्पण दिनाक ३ ३ ९४ को हुआ था। तभी से शहर व खानिया जी में (चूलगिरिजी) धर्मानुरागियों की भीड़ सुबह से शाम तक दीवानजी का मन्दिर, लालजी साड का रास्ता से जाते हुए देखने को मिलती है जहाँ पर सघ विराजमान है। प्रतिदिन पूज्य महाराज एव माताजी व प नेमीचन्द जी पाटनी मंत्री टोडरमल स्मारक वालों के प्रवचन हो रहे हैं। जिन्हें सुनकर भव्य जीव लाभान्वित हो रहे हैं। विभिन्न स्थानों पर सघ के सान्निध्य में विशेष कार्यक्रम आयोजित हो रहे हैं। इन्ही आयोजनो मे हमने पूज्य महाराज व माताजी के सान्निध्य में आचार्य श्री १०८ चारिय चातुर्मास शान्ति सागर महाराज दक्षिणवालों की पुण्य तिथि मनाई थी एव आचार्य १०८ श्री विमल सागर महाराज की जन्म जयन्ती मनाने का अवसर मिला। श्री १०५ आर्यिका ज्ञान चिंतामणी विजयमती माताजी के सान्निध्य में एक धार्मिक शिविर का आयोजन किया था और सभी महिलाओं को सर्टिफिकेट पुरस्कार रूप में

श्रीमती शारदा देवी छाबड़ा धर्म पत्नी श्री नन्दलाल जी छाबड़ा ने अपने कर कमलों द्वारा दिये थे, इनको भी मैं धन्यवाद देता हूँ।

इसी चातुर्मास में हमें परम पूज्य समाधि सम्राट मुनि कुञ्जर श्री १०८ आचार्य आदिसागर महाराज (अंकलीकर) का श्रुत पंचमी को आचार्य पद दिवस मनाने का अवसर प्राप्त हुआ।

परम पूज्य श्री १०८ सन्मति सागर महाराज एवं श्री १०५ विजयमती माताजी व संघस्थ साधुओं ने हमारे अनुरोध पर जयपुर पधार कर वर्षा योग करके हमको धर्म प्रभावना करने में हमें सहयोग प्रदान किया उसके लिए हम बड़े आभारी हैं। वर्षा योग में सहयोग देने वाले सभी दातारों का भी बड़ा आभारी हूँ कि जिन्होंने हमें आर्थिक सहयोग प्रदान किया। विशेष आर्थिक सहयोग श्री सरदारमल जी ओमप्रकाश जी खन्डाका, श्री देवप्रकाश जी खण्डाका, श्री सनत कुमार जी खण्डाका श्री रामावतार जी राणा, श्री गनेश जी राणा, श्री उत्तमचन्द जी खोरावाले एवं भंवरी बाई काला प्रमुख है। जिनके हम बड़े आभारी हैं।

वर्षा योग में आयोजित हुए विधानों के कार्यक्रमों को विधि विधान पूर्वक सम्पन्न कराने में श्री पं. डा. सनत कुमार जी जैन (संस्कृत कालेज, जयपुर) का हमें विशेष सहयोग प्राप्त हुआ। अतः उनका भी आभार व्यक्त करते हुए धन्यवाद देता हूँ।

मुनि संघ व आर्यिका संघ में चिकित्सा सहयोग प्रदान करने वाले श्री वैद्यराज सुशील कुमार जी शाह, श्री फूलचन्द जी वैद्य को भी बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूँ कि आपने हमारे अनुरोध पर समय-समय पर अतिव्यस्त होते हुए भी पधारकर मुनिसंघ व आर्यिकासंघ की चिकित्सा करने में सहयोग प्रदान किया। उसके लिए हम आपके बड़े आभारी हैं और आशा करते हैं कि भविष्य में भी आपका सहयोग इसी प्रकार प्राप्त होता रहेगा।

प्रबन्धकारिणी समिति व श्री प्रकाशचन्द जी दीवान साहब को भी मैं बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने मंदिरजी में गुरुओं को ठहराने की स्वीकृति प्रदान की एवं श्री अमरचन्द जी दीवानजी की धर्मशाला में यात्रियों को ठहराने, चौका लगाने व अन्य कार्यों के लिए सहयोग प्रदान किया। किसी भी प्रकार की दिक्कत इस कारण हुई हो तो वो हमें क्षमा प्रदान करें।

मैं खन्डाका परिवार विशेषतौर से सर्व श्री देवप्रकाश जी खन्डाका व श्री सनतकुमार जी खन्डाका को भी बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने पार्श्वनाथ भवन से आर्यिका संघ को त्यागी भवन गोधों का रास्ता में स्थित है ठहराने की, आगे होकर सभी साधनों सहित जुटाकर स्वीकृति प्रदान की।

समाज के सभी धार्मिक बन्धुओं का भी मैं बहुत-बहुत आभारी हूँ कि जिन्होंने हमें इस कार्य को पूर्ण कराने में सहयोग प्रदान किया।

११ सितम्बर, १९९४ को आचार्य श्री सन्मति सागर महाराज का केंश लोच था, उसमें हमारे उत्तर प्रदेश के राज्य वन मंत्री श्री सुन्दरसिंह जी बघेल साहब विशिष्ट अतिथि के रूप में हमारे अनुरोध पर जयपुर एक दिवसीय कार्यक्रम में पधारे थे मैं उनका भी आभारी हूँ जिन्होंने अपना अमूल्य समय निकाला एवं आचार्य श्री के चरणों में पधारे कर कार्यक्रम को सफल बनाया।

मुनि संघ के लिए एवं आर्यिका संघ के लिए जिन महानुभावों ने चौका लगाकर हमें पूर्ण सहयोग प्रदान किया एवं बाहर से चौका लेकर आने वाले महानुभावों को भी मैं धन्यवाद देता हूँ विशेषतौर पर स्वर्गीय भंवरलाल जी काला की धर्मपत्नी श्रीमती भंवर बाई काला व इनके सुपुत्र श्री सुरेश कुमार जी काला एवं छोटे पुत्र श्री कमलचन्द जी काला फर्म जैना वाच एंड रेडियो कं., घीवालों का रास्ता, जयपुर, श्री सरदारमल जी ओमप्रकाश जी खन्डाका, लादूलाल जी, ब्र. मैनाबाई ब्र. सुशीलाबाई, ब्र. गुलकन्दी बाई प्रमुख हैं।

वर्षा योग में हमने पूर्ण प्रयास किया कि व्यवस्था बहुत अच्छी से अच्छी रखी जाये फिर भी हमारी परिस्थितियों वश कई प्रकार की कमियां रही हैं जिसमें अगर आपको तनिक भी कष्ट पहुँचा हो तो आपसे मन, वचन, काय से क्षमा याचना करते हैं।

वर्षा योग में मैं बाण वालों की धर्मशाला के श्री बालकिशन जी बाण वालों को धन्यवाद देता हूँ कि जिन्होंने यात्रियों को ठहराने व उनकी सुख-सुविधा का अत्यधिक ध्यान रखा।

हमें हार्दिक प्रसन्नता है कि इस अवसर पर श्री १०८ आचार्य सन्मति सागर महाराज चातुर्मास व्यवस्था समिति, जयपुर (राजस्थान) आचार्य समाधि सम्राट मुनि कुञ्जर आदिसागर महाराज के जीवन के उपदेशामृत **"दिव्य दृष्टि अंकलीकर आदि ज्योति"** की पुस्तक का प्रकाशन करवाने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है।

हम श्री सुभाष जी बगड़ा सिविल लाइन्स वाले व इनकी धर्मपत्नी श्रीमती पद्मादेवी बगडा व श्री बाबूलालजी जैन व इनकी धर्मपत्नी श्रीमती इंद्रा देवी को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने इस पुस्तक का व्यय द्रव्यभार उठाया है। इन्हें आचार्य श्री एवं आर्यिक रत्न का मंगल आशीर्वाद है।

मैं चातुर्मास व्यवस्था समिति के सभी पदाधिकारी, सदस्यगण, संरक्षकगण को धन्यवाद देता हूँ कि जिन्होंने तन, मन, धन से चातुर्मास को सफल बनाया।

दिनांक १ से १४ सितम्बर तक धार्मिक प्रशिक्षण शिविर एवं दिनांक १३.११.९४ व १४.११.९४ को हमने ३२वां आचार्य श्री सन्मति सागर महाराज का भव्य दीक्षा दिवस मनाया। मुख्य अतिथि, अध्यक्ष, को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने इस कार्यक्रम को सफल बनाया।

दिनांक २२ मई, १९९४ को हमने आर्यिका रत्न विजयमती माताजी का जन्म-जयन्ती सिविल लाइन के मन्दिर में मनाई, मैं सिविल लाइन के पदाधिकारियों को धन्यवाद देता हूँ कि जिन्होंने माताजी की जयन्ती सफलतापूर्वक मनाई।

इस कार्य में सफलता प्राप्त होना यह सब जिनेन्द्र प्रभु की कृपा व परम पूज्य समाधि-सम्राट आचार्य मुनि कुञ्जर १०८ आदिसागर महाराज की दिव्य दृष्टि का शुभाशीर्वाद के साथ-साथ परम पूज्य सिद्धान्त चक्रवर्ती १०८ श्री सन्मति सागर महाराज व श्री प्रथम गणिनी ज्ञान चिंतामणि आर्यिका रत्न विजयमती माताजी के आशीर्वाद का ही फल मानता हूँ क्योंकि आपके ही शुभाशीर्वाद व प्रेरणा से इस पुस्तक का प्रकाशन हो सका है।

अन्त में परमपूज्य श्री १०८ आचार्य सिद्धान्त चक्रवर्ती सन्मति सागर महाराज एवं प्रथम गणिनी ज्ञान चिंतामणि १०५ श्री विजयमती माताजी के करकमलों में इस पुस्तक की प्रथम प्रति विमोचन करने हेतु अथवा विमोचन की हुई पुस्तक प्रेषित है।

दिनांक १४.११.९४

आशीर्वाद की भावना के साथ
गुरु उपासक
ताराचन्द पाटनी
(कार्याध्यक्ष)
श्री सन्मति सागर चातुर्मास व्यवस्था समिति, जयपुर

आचार्य १०८ आदिसागर जी महाराज
के विषय में
विद्वत संगोष्ठी की सम्मति

जयपुर में दिनांक २६ सितम्बर से ९ अक्टूबर, ९४ तक आयोजित सर्वतोभद्र महामण्डल विधान के पावन अवसर पर विद्वत् परिषद् एवं शास्त्रिपरिषद् व विशिष्ट आमंत्रित विद्वानों की दो दिवसीय संगोष्ठी में आचार्य आदिसागर जी महाराज एवं आचार्य शान्तिसागर जी महाराज (दक्षिण) के जेष्ठत्व को लेकर विस्तार से चर्चा हुई। लेख वाचन भी हुए। विद्वानों ने आदिसागर जी अंकलीकर को आचार्य शान्तिसागर जी महाराज (दक्षिण) से पूर्व का माना एवं कुछ विद्वानों को छोड़कर विद्वानों ने आदिसागर महाराज अंकलीकर के प्रथम आचार्य के रूप में साक्ष्य प्रस्तुत किये। तदनुसार आदिसागर जी महाराज अंकलीकर को आचार्य मानने में कोई धर्म विरुद्ध कार्य नहीं है।

व्यर्थ का विवाद धर्म-विरुद्ध अवश्य है। धर्म मार्ग में लगे भव्यजनों को इन आचार्य परमेष्ठियों का अनुसरण कर अपना आत्म कल्याण कर सुखी बनें। सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य श्री १०८ सन्मति सागर जी महाराज एवं परम विदुषी गणिनी आर्यिका रत्न विजयमती माताजी के चरणों में विनम्र नमोस्तु करता हुआ मंगल भावनाओं सहित—

डा. सनत कुमार जैन
व्याख्याता
श्री दि. जैन आचार्य संस्कृत महाविद्यालय,
जयपुर - ३

आर्यिका प्रथम गणिनी १०५ विजयमती माताजी का शुभाशीर्वाद

आप 'अंकलीकर आदि ज्योति' पुस्तक प्रकाशित कर रहे हैं। यह आपकी अचल, अकाट्य गुरुभक्ति का परिचायक है। श्री ताराचन्द जी पाटनी संकलनकर्ता हैं, जिन्होंने इस चातुर्मास काल में प. पूज्य चारित्र चैक्रवर्ती मुनि कुञ्जर सम्राट आचार्य श्री आदिसागर जी (अंकलीकर) के विषय में अति गहराई से प्रामाणिक जानकारी ज्ञात कर ही इस कार्य को किया है। अतः अनेक भ्रामक प्रवृत्तियों का इससे उन्मूलन हो सकेगा। भक्तों को यथार्थता का परिचय प्राप्त होगा। साथ ही अंकलीकर जी के तृतीय पट्टाधीश सिद्धान्त चक्रवर्ती, वात्सल्य रत्नाकर तपस्वी सम्राट श्री सन्मति सागर जी के संबंध में व्याप्त निर्मूल धारणाएं भी नष्ट होंगी। फलतः गुरुभक्ति को सुदढ़ संबल प्राप्त होगा। परम पूज्य समाधि सम्राट द्वितीय पट्टाधीश आचार्य श्री महावीरकीर्ति जी का स्मरण कर उनकी त्याग-तपस्या, समाज सुधार, धर्म प्रचार आदि का स्मरण होगा। अभिप्राय यह है कि यह अंकलीकर परम्परा किस प्रकार अक्षुण्ण रूप से ठोस और आगमानुकूल आर्ष परम्परा की रक्षा करती आ रही है। यह विदित कर समाज की गुरुभक्ति को बल प्रदान करेगी।

आपका यह कार्य प्रशंसनीय एवं शोभनीय है। इसके प्रकाश को जिन्होंने तन, मन, धन से सहयोग प्रदान किया है। उन सबको मेरा शुभाशीर्वाद है कि वे इसी प्रकार देव, शास्त्र, गुरुभक्ति को वृद्धिगत करते हुए आत्मकल्याणरत रहें॥

१०५ गणिनी आर्यिका विजयमती

मूलनायक भगवान
१००८ श्री आदिनाथ स्वामी
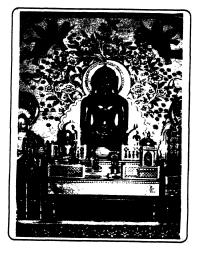
3

श्री महावीरकीर्ति जी
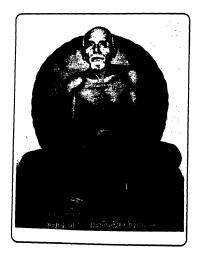
आचार्य १०८ श्री महावीरकीर्ति जी महाराज

2

आदिसागर जी

मुनि कुञ्जर, समाधि सम्राट चारित्र चक्रवर्ती आचार्य १०८ श्री आदिसागर जी महाराज

ग्रन्थ विमोचन

श्री सम्मेदशिखर जी सिद्धक्षेत्र पर आचार्य आदिसागर जी (अंकलीकर) अभिनन्दन ग्रन्थ का विमोचन २७ सितम्बर, १९९४ को आचार्य विमलसागर जी महाराज के कर कमलों द्वारा हुआ।

अंकलीकर के विषय में मेरे उद्गार

श्रीमान ताराचन्द जी पाटनी,

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आपकी चातुर्मास व्यवस्था समिति **'अंकलीकर आदि ज्योति'** नामक पुस्तक प्रकाशित कर रही है इसमें मेरे निम्न उद्गार हैं—

(1) श्री चारित्र चक्रवर्ती ग्रन्थ जो श्रीमान पं. सुमेर चन्द्र जी न्यायतीर्थ सिवनी द्वारा लिखा है।

अंकलीकर आचार्य आदिसागर जी महाराज के दक्षिण प्रान्त में तपश्चर्या करते रहे। इससे उनकी विशेष प्रसिद्धि नहीं हो सकी।

(2) इस ग्रन्थ के आधार से श्री १०८ ज्ञानसागर जी महाराज के सान्निध्य में 'गयाजी' में विध्दत् गोष्ठी में जिसमें ६०-७० विद्वान उपस्थित थे, उनके समक्ष चर्चा में भी 'अंकलीकर' आचार्य आदिसागर महाराज थे। ऐसा निर्णय किया गया था।

नोट—

(1) जिनके स्वर्गवास को करीबन ५०-५५ वर्ष हो गये अतः वाद-विवाद करने में किसी को भी कोई लाभ नहीं है।

(2) पहिले के आचार्यों के मुताबिक घोर तपश्चर्या करके एवं मूल गुणों को पालन करते हुए वर्तमान में आचार्यत्व एवं साधुत्व पदवी को अक्षुण्ण बनाने में योगदान करते रहे ऐसा जैन धर्म का शासन कहता है।

(3) वाद-विवाद से आचरण में हीनता आती है एवं द्वेषभाव बढ़ता है जो अनन्तानुबंधी कर्मों के आश्रव बन्ध में कारण पड़ता है।

आपका
पं. अमृत लाल जैन शास्त्री
प्रतिष्ठाचार्य
असादी बार्ड नं. २ दमोह
जिला दमोह (मध्यप्रदेश)
दिनांक ११.१०.१९९४

आचार्य सन्मति सागर महाराज का शुभाशीर्वाद

परम हर्ष हुआ कि 'अंकलीकर आदि ज्योति' नामक पुस्तक का संकलन श्री ताराचन्द जी पाटनी ने किया है। जिसमें आचार्य शान्ति सागर जी महाराज द्वारा वंदित दक्षिण भारत के वयोवृद्ध दिगम्बर संत आदर्श तपस्वी अप्रतीम उपसर्ग महामुनि, चारित्र चक्रवर्ती, मुनि कुञ्जर, समाधि सम्राट, आचार्य आदिसागर जी महाराज अंकलीकर के जीवन परिचय के साथ उनके वचनों का भी ज्ञान होगा, जो मोक्ष मार्ग का पथिक बनने में अनुपम सहयोगी होगा।

प्राचीन आयतन की जानकारी होवे इसलिए इस पुस्तक के प्रकाशन की आवश्यकता है। अतः इस पुस्तक के प्रत्यक्ष परोक्ष सहयोगियों को मेरा मंगलमय शुभाशीर्वाद है।

आचार्य सन्मति सागर
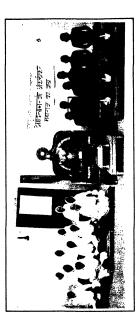
आचार्य १०८ सिद्धान्त चक्रवर्ती सन्मति सागर महाराज एवं श्री १०५ आर्यिका रत्न, ज्ञान चिंतामणी विजयमती माताजी संघ सहित छोटे दीवानजी का मन्दिर लाल जी सांड के रास्ते में विराजमान है।

आचार्य विमलसागर जी

वात्सल्य रत्नाकर आचार्य १०८ श्री विमलसागर जी महाराज

श्री सन्मति सागर जी

परम तपस्वी, सिद्धान्त चक्रवर्ती, वात्सल्य रत्नाकर
आचार्य १०८ श्री सन्मति सागर जी महाराज

आर्यिका विजयमती माताजी

प्रथम गणिनी, ज्ञान चिंतामणी, आर्यिका रत्न १०५ श्री विजयमती माताजी

प० पू० निमित्तज्ञान शिरोमणी श्री १०८ श्री आचार्य विमलसागर जी महाराज का आशीर्वाद

समस्त दिगम्बर जैन समाज को धर्मवृद्धि आशीर्वाद। पूर्ण समाज को सूचित किया जाता है कि हमारी आचार्य परंपरा में प्रथम में मुनि कुंजर आदिसागर जी (अंकलीकर) थे। आप आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी के दीक्षा गुरू थे। मुनि कुंजर का अर्थ आचार्य से होता है। अतः आचार्य श्री आदिसागर जी (अंकलीकर) थे। उन्होंने अपना आचार्य पद महावीर कीर्ति जी को दिया है। अतः जैन समाज में आचार्य आदिसागर जी (अंकलीकर) की परंपरा और आचार्य शांतिसागर जी की परंपरा इस युग में निर्वाध चली आ रही है। समाज का कर्तव्य है कि किसी प्रकार का विवाद न करके दोनों आचार्य परंपरा को आगम सम्मत्त मानकर वात्सल्य से धर्म प्रभावना करें।

ता० २३-१०-९३

आचार्य विमल सागर

मुरलीधर जी राणा की नशियाँ खानियाँ, जयपुर

गुलाबी जैन नगरी जयपुर से लगभग ५ किलोमीटर दूर पूर्व की और आगरा रोड़ पर चारों और पहाड़ियों व मिट्टी के टीलों से घिरा हुआ अत्यंत रमणीक स्थान है जो जयपुर का नन्दनवन कहा जा सकता है, यह स्थान खानियां के नाम से प्रसिद्व है। उस समय जयपुर के शासक महाराजाधिराज श्री रामसिंह जी थे। आचार्यों के उपदेश से प्रेरित होकर श्री मुरलीधर जी राणा नामक दि० जैन अग्रवाल श्रावक ने पहाड़ी पर जो आजकल चूलगिरि के नाम से विख्यात है – मंदिर निर्माण की योजना बना डाली, उसका मूहर्त कर दिया तथा चरण स्थापित कर दिये। किन्तु नीचे ही रूप निवास बाग में रहने वाले तत्कालीन शासक ने इस पहाड़ी पर मंदिर निर्माण की अनुमति नहीं दी।

किंतु धार्मिक भावना में प्रगाढ जिन धर्म प्रेमी ने इसी पहाड़ी के नीचे बाग व जमीने खरीद कर मंदिर निर्माण करने की योजना बनाई व तत्कालीन महारानी शिशोदिया जी जिनके नाम से शिशोदिया राणी का बाग है, से प्रार्थना कर मंदिर पहाड़ी के नीचे बनाने की अनुमति प्राप्त की व बाग तथा पीछे पहाड़ी तक की जमीन व पश्चिम की तरफ मिट्टी के टीले तक की भूमि क्रय कर मंदिर निर्माण का कार्य तेजी से प्रारंभ कर दिया तथा मिती वैसाख शुक्का ५ रविवार संवत १९९५ को मंदिर की संगमरमर की वेदी में मूल नायक १००८ श्री वासुपूज्य जिनेंद्र भगवान की मूंगे के रंग की प्रतिमा प्रतिष्ठित कराई।

श्री मुरलीधर जी राणा के स्वर्गवास के पश्चात् उनके ज्येष्ठ पूत्र श्री **ईश्वर** लाल जी राणा ने मंदिर का बाकी निर्माण कार्य पूरा कराया तथा मंदिर में स्वर्ण व रंगों से आकर्षक चित्राम बनवाए, स्वर्ण का इतना भारी कलापूर्ण कार्य दुर्लभ है, जो कहीं देखने में नहीं आता। मंदिर में २ चेत्यालय व मूल वेदी के पीछे जालियों में प्रतिमायें विराजमान कराईं। मंदिर के पीछे साधुओं व श्रावकों के ठहरने के लिये कई कमरे बनवाये व नीचे बहुत बडा बाग व वारादरी का निर्माण कराया तथा कुछ ऐसे कमरेबनवाये जहां साधु एकान्त में ध्यान लगा सकें व तपस्या कर सकें। बाग में मंदिर के बाहर कुल दो कुए हैं। जिनमें स्वच्छ जल बारहों महिने रहता है। धर्मस्थान के साथ साथ यह गोठ आदि करने के लिये बडा ही रमणीक स्थान है।

इस विशालमंदिर व उधान में जो कि साधुओं के लिए जयपूर में सर्वोत्तम स्थान है। लगभग भारत के सभी विख्यात दिगम्बर साधु पधारे हैं। आचार्य श्री शांति सागरजी महाराज पधारे थे, आचार्य श्री १०८ वीर सागरजी महाराज ने यहां ३ चातुर्मास किये व यहीं समाधि ली।

संवत २०१४ में आचार्य श्री १०८ वीर सागरजी महाराज की निष्ठा और भावना के अनुंसार प० पू० तीर्थभक्त शिरोमणी आचार्य परमेष्ठी श्री १०८ महावीर कीर्ति जी भी खानियां पधारे। आप महान संत प० पू० चारित्र चकववर्ती मुनि कुंजर समाधिसम्राट् आचार्य परमेष्ठी श्री १०८ श्री आदिसागरजी अंकलीकर के पट्टाधीश थे। अंकलीकर जी २०वीं सदी के प्रथमाचार्य थे। आपने अपने समाधिग्रहणकाल में ही आपको सुयोग्य समझकर अपना आचार्य पद प्रदान कर निर्विकल्प आदर्श समाधि ऊदगॉव (कुंजवन) महाराष्ट्र में की थी। इस समय के अद्भुत दृश्य से आचार्य श्री शांतिसागरजी (दक्षिण) ने प्रभावित हो समाधि की कला प्राप्त की थी। 'यथा राजा तथा प्रजा', 'जैसा पिता वैसा पुत्र' कहावत के सदृश्य मुनिकुंजर समाधि सम्राट् चारित्र चकवर्ती प्रथमाचार्य आदिसागरजी अंकलीकर के शिष्य श्री प० पू० १८ भाषाभाषी उम्दर विद्वान, एकांतवाद के निराकरण में दक्ष श्री १०८ आचार्य परमदेव महावीरकीर्ति जी का भी समाधि कार्य दक्ष होना स्वाभाविक ही है।

एक दिन आ० श्री १०८ वीरसागरजी को खांसते हुए खंखार आया तो आपने अपने हाथ में झेलना चाहा। उस समय श्री वीरसागरजी महाराज ने यह कर कि "भैया तेरे पास गुरुणांगुरु का पद है" यह उचित नहीं। इससे आपकी आचार्य श्री आदिसागरजी अंकलीकर के प्रति प्रगाढ भक्ति और श्रद्धा का परिचय प्राप्त होता है। यही नहीं आपकी समाधि के अनंतर आपका पद किसे दिया जाये ? यह प्रश्न हुआ। उस वक्त समस्त मुनि आर्यकादि चतुर्विध संघ ने श्री आ० महावीर कीर्ति जी महाराज को पट्टाधीश बनाने का निर्णय लिया। परन्तु गुरुपद गौरव की गरिमा के अक्षुण्ण पुजारी आचार्य श्री ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। आपने स्पष्ट शब्दों में कहा, मेरे पास मेरे गुरुदेव का दिया हुआ उन्हीं का पद है, यह सर्वोत्तम और सर्वश्रेष्ठ एंव ज्येष्ठ है फिर अन्य का पद क्यों ग्रहण करू ? मेरे भाई शिवसागर जी इस संघ में योग्य हैं उन्हें ही देना चाहिए। इस प्रकार निर्णय देकर स्वंय आपने ही विधिवत श्री शिवसागर जी को आचार्य बनाया। ये समस्त घटना हमारी प्रत्यक्ष है। उस समय हमारा समस्त राणा परिवार उपस्थित था। यह खानियॉ स्थान आचार्य,

मुनिराज, आर्यका, क्षुल्लक, क्षुल्लिका, ब्रह्मचारी, आदि त्यागी वृद्धों के ध्यानाध्ययन, जप, तप, अनुष्ठानों की वनस्थली रही है। हमें गौरव है कि हम सतत साधु समागम का लाभ प्राप्त करते रहते हैं।

भगवान श्री १००८ वासुपूज्य की इस चमत्कारी सुरम्य नसियॉ में भविष्य में भीं गुरू चरण अंकित हो, हमें मार्गदर्शन होता रहे, यही भावना भाते हैं। हम भी साधु दिगम्बर जैन मुद्रा धारण कर श्रेष्ठ समाधि सिद्ध करें। यही भावना है। आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज ने ५ चातुर्मास किये तथा श्री १०८ गणधराचार्य कुंथुसागरजी एंव १०५ गणिनि आर्पिका विजयमति माताजी ससंघ का १९७२ में चातुर्मास हुआ सन्मार्ग दिवाकर १०८ श्री विमलसागरजी महाराज ने ससंघ यहां सन् १९८७ में चातुर्मास किया। सभी दिगम्बर साधु इस स्थान को चातुर्मास व धर्मसाधना के लिए सर्वोत्तम स्थान मानते हैं। सन् १९५५ में आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज यहां पधारे व उन्होंने यहां ध्यान लगाया तो यहां की एकाग्रता व शांति से वे बहुत प्रभाावित हुए। जब उन्हें श्री मुरलीधरजी राणा के ही वंशज एंव परिवार ने बताया कि इस मंदिर के निर्माता पहले यह मंदिर पीछे की पहाड़ी पर बनाना चाहते थे और वहां चरण बनाकर मुहूर्त भी कर दिया था तो आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज हम सबको लेकर पहाड़ी पर गये तथा वहां उन्होनें ध्यान लगाया। उन्होंने यह स्थान इतना मनोरम व अतिशय युक्त पाया कि उन्होंने उसी समय हम को कहां कि वहां मंदिर बनाने का कार्य प्रांरम्भ करायें। इस आदेश के अनुसार हम सब राणा परिवार ने दिनांक ११–४–१९५५ को प्रांरम्भ में १००ग५० फीट भूमि पहाड़ पर खरीदी व इसमें मंदिर निर्माण कार्य हुआ व इसका प्रथम पंचकल्याणक १९६५ में हुआ। आज यह चूलगिरी के नाम से विख्यात अतिशय क्षेत्र है।

सन् १९८१ जयपुर में हुई अतिवृष्टि से मंदिर के एक ओर की पट्टियां टूट गईं जिससे काफी क्षति हुई। अतः पुन. नई पट्टियां लगाकर पूर्व की भांति स्वर्ण युक्त कला पूर्ण चित्राय व कार्य लगातार कराया जा रहा है।

गुरूदेवों के शुभाशीर्वाद एवं प्रेरणा से मैं प्रतिदिन यहां आकर पूजन, दान जाप अनुष्ठानादि करता रहता हूं। आज भी मेरी भक्ति व आत्मबल वैसा ही है। इस समय ६५ वर्ष की आयु में मैं नियम से यहां आता हूं और यथायोग्य जीर्णोद्धारादि कार्यों में भाग लेता हूं। मेरी धर्मपत्नी सौ०श्रीमती ललिता देवी राणा भी मेरे सभी धर्मकार्यों में सहयोग प्रदान कर धर्मार्जन करती है व

पुण्यसंचय करती है। शुभ योग से मेरे सभी पुत्र पौत्रादि भी धर्मनिष्ठ गुरूभक्त हैं। भविष्य में भी धर्म भावनाएं सबके हृदय में बनी रहें यही भावना है।

प्रस्तुत पुस्तक का प्रकाशन हमें सम्यग्ज्ञान में सहयोगी बने। हम प०पू० सिद्धान्त चकवर्ती आचार्य सन्यतिसागर महाराज तथा प०पू० ज्ञानचिंतामणि मणिति आर्यका विजयमति माताजी के पावन चरणों में अनंतनमोस्तु करते हैं जिन्होंने सत्प्रेरणा प्रदान कर सम्यग्ज्ञान प्रचार का अवसर दिया।

भगवानदास राणा

प०पू० चारित्र चक्रवर्ती मुनि कुंजर समाधि सम्राट दिगम्बराचार्य श्री आदि सागरजी (अंकलीकर) का परिचय

आपका जन्म स्थान दक्षिण महाराष्ट्र स्थित अंकली ग्राम है। गृहस्थावस्था में शिव गौड़ा नाम था एंव जन्म नाम बेवन्ना ऐंद्रेपोण चतुर्थ जाति सूर्यवंश है। आपका जन्म समय भाद्रपद शुक्ला ४ सन् १८३६ है। आपके पिता का नाम सिद्धगौड़ा आपके पिता का नाम सूर्यवंशी शंकर गौड़ा आपके पिता का नाम गजगौड़ा था। आप अंकली में राज्य करते थे। शिवगौड़ा की माता का नाम अक्काबाई था। जिसका सदाचार से जीवन ओतप्रोत था। एक बार आपका कुछ स्त्रियों ने उपहास किया तब हथेली पर अतिशय उष्ण अग्नि भस्म रखकर चने भूंज दिये। यह सदाचार की प्रतीति सर्वत्र जाहिर हो गई।

शिवगौड़ा गृहस्थावस्था में महापराकमी शूरवीर दयालु और जिनधर्म पर अतिशय श्रद्धालु श्री जिनेन्द्र पर अतिशय भक्ति रखते थे। अंकली में श्री बृष मनाथ तीर्थंकर भगवान का मंदिर बनाते समय बड़ी बड़ी विशाल शिलाओं को अकेले ही उपर चढ़ा देते थे। पंडित प्रवर अप्पा शास्त्री का शास्त्र प्रवचन सुनते थे बाद में उसका मनन चिंतन भी करते थे और अन्यों को उसकी शिक्षा देते थे। आपकी शिक्षा को सभी मानते थे। और अनुकरण भी करते थे। ६ किलों का काशीफल खाकर पचाना, कृष्णा नदी की बाढ़ में १२ हाथ नीचे तक डुबकी लगाना, एक मुष्ठी के प्रहार से नारियल फोड़ना, एक किलो मूंगफली सींगदाना, चीनी बादाम और एक सेर गुड़ भोजन के बाद खाना, हाथ से कपास के झाड़ जड़मूल से उखाड़ कर ३ घंटे में गाड़ी भरना ऐसे अनेक कार्य गृहस्थ अवस्था में उनके लिए सामान्य था। [illegible] [illegible] दुर्भिक्ष पड़ने पर शरणागत प्राणियों को धैर्य बंधाते हुए कहा कि श्री जिनेन्द्र देव का स्मरण करना चाहिए। उनको खत्ती (पेव) वालों के पास ले जाकर उनको कहा कि इनको धान्य देकर इनकी रक्षा करनी चाहिए। उन्होंने बात को अनसुना कर दिया तब दुर्भिक्ष पीड़ित लोगों को कहा कि इनके पेवों को खोलो और जितना अनाज चाहिए ले जाओ। डरो मत मैं खड़ा हूँ। इस प्रकार उनकी रक्षा की। बाद में मुकदमा चला तब सरकार को स्पष्ट प्रेम पूर्वक उत्तर दिया कि मुझे दुर्भिक्ष पीड़ित जनता पर दया आ गई। मैंने अनाज के पेवों के स्वामियों को अन्न का सदुपयोग करने को कहा किन्तु इन्होंने नहीं किया तब मैंने पेवों को

खुलवाकर अन्न दिया। ऐसा जानकर सरकार ने न्याय विचार कर शिव गौड़ा को निर्दोष छोड़ दिया। नीची बातें हृदय में बाण के समान भिद जाती थी। गृहस्थावस्था में सशक्त, साहसी, धैर्यवान व प्रसंग आने पर छाती अड़ाकर ताल ठोंक कर काल से भी बाजी लेने के लिए तैयार रहते थे। "देखें काल क्या करता है ?" ऐसा पूर्ण पूर्व से ही साहस रखते थे।

दूसरे के विवादों के प्रेम, शांति, दृष्टांत और ज्ञान से परस्पर में मिलमिला कर रहना प्रिय था। सत्य, मधुर, और हित भाषी थे। योग्य कार्य करके ही शांति होती थी। शिवगौड़ा शेठवाल की पंच कल्याणक प्रतिष्ठा में गये थे। वहां दर्शन कर रात्रि भोजन त्याग, मिथ्यात्व त्याग, कंदमूल त्याग आदि साधारण व्रत ग्रहण किया। अष्ठमी चतुर्दशी का उपवास नियम पूर्वक करते रहे। वाहुवलिस्वामी के पर्वत की वंदना प्रत्येक अमावस्या को भक्ति पूर्वक जाकर करने लगे। विद्वान और सत्पुरूषों का सत्संग करने से और धार्मिक हरिवंश पुराण, पांडव पुराण, नाम कुमार चरित्र, आदि के स्वाध्याय करने से सच्चरित्र पर श्रद्धा उत्पन्न हो गई। युवा अवस्था प्राप्त होने पर आउ नामक कन्या से विवाह हो गया। तवन गौड़ा नामक पुत्र उत्पन्न हो गया। २७ वर्ष की आयु में वैराग्य उत्पन्न हुआ था। उस समय बालक ५–६ वर्ष का था। अतः सम्मेदशिखरजी की यात्रा की।

वैराग्य स्थिरता को प्राप्त हो रहा था तभी नांदनी में ३ उपवास करने के पश्चात श्री भट्टारकजी स्वामी श्री जिन्नप्पा से स्वाति नक्षत्र १९०६ में क्षुल्लक दीक्षा धारण की। नाम आदि सागर रखा गया। ३ महीने बाद आर्य दीक्षा दही गांव में श्री जिनेन्द्र भगवान की साक्षी पूर्वक गृहण की। इस अवस्था में ३ उपवास के बाद भिक्षा लेने का उत्तम अभ्यास कर वैराग्य को दृढ़ कर लिया था। तब मगसिर शुक्ला २ सन् १९९४ श्री सिद्ध क्षेत्र स्थान श्री १००८ श्री कुंथलगिरी तीर्थाधिराज पर श्री जिनेन्द्र देव की साक्षी पूर्वक निर्ग्रंथ दीक्षा स्वंय धारण की। कारण यह था कि उस समय निर्गथ के महा प्रभाव से सतत निर्ग्रंथ मुद्रा धारण करके रहने वाला कोई भी श्री गुरू प्राप्त नहीं हुआ था। निर्ग्रंथ दीक्षा लेने के बाद में आदिसागर श्री मुनिकुंजर ने जब कुंभोजवाहुवलि पहाड़ पर केश लोंच किया उस समय आकाश में जयघोष·हुआ था। उस समय कुछ लोग महाराज के दर्शन के लिए आए थे जो पहाड़ के नीचे थे वे जयघोष का शब्द सुनकर उपर आये थे और विचार करने लगे कि यहां बहुत लोगों ने जयघोष किया था यह सुनकर हम आए हैं। उत्तर दिया गया कि यहां केवल

महाराज और उपाध्याय पंडित हैं और कोई नहीं। आगन्तुकों ने निर्णय किया कि यह जयघोष देवकृत है। उस देवकृत जयघोष को सुनने वाले, उदगाँव देशाई देव थे। एक दिन बाहुवलि पहाड़ पर एक जंभा नामक पिच्छी धारिणी व्रति रात्रि के समय एकान्त में आ करके महाराज श्री से बड़े प्रेम से कहने लगी कि तुम्हारी कोई स्त्री नहीं और मेरा कोई पति नहीं। आओ हम तुम दोनों प्रेम से रहें। तुम मेरे पति बनो और मैं तुम्हारी पत्नि बनूं। स्त्री परीसह करने के लिए मोह रहित निर्विकार भाव और निर्विकार मुद्रा से गुफा में ध्यानस्थ हुए और अपने शील का रक्षण किया। वह हताश हो भाग गई। एक बार स्वपन में एक सुन्दर स्त्री ने एक रेशमी वस्त्र महाराज के उपर ड़ाला। महाराज उसी समय जागृत हो गये इससे सिद्व होता है कि वे स्वपन में जागृत रहते थे और दिगम्बरत्व का रक्षण करते थे। उनसे स्पर्शित जल से सर्प विष दूर होना, उनके चरणोदक से और उनकी तपोभूमि की मिट्टी को लगाने से बड़ी बड़ी बीमारी का दूर होना शांति प्राप्त होना इत्यादि अतिशय होते रहते थे। वे निःसन्देह एक ऋद्विधारी साधु थे।

स्तवनिधि श्री १००८ पार्श्वनाथ के सेवक ब्रह्म क्षेत्र तथा कुडंलपुर क्षेत्र श्री बाहुवलि अतिशय क्षेत्र पर पूर्ण भक्ति थी। तथा इनकी यात्रा विशेष रीति से करते रहे। नवादा, गुणावा, आरा, पटना ,आयोध्या, तारंगा, शत्रुंजय, पालीताना, श्री गिरनार, आबू, अंचलगढ़, पावागढ़, कुंडलपुर, सिंहपुरी, मांगीतुंगी, गजपंथा, मुक्तागिरि, श्रवणबेलगोला, कारकल, बड़वानी, सिद्धवरकूट, सोनागिर आदि सिद्ध क्षेत्र व अतिशय क्षेत्र तीर्थो की भक्ति व श्रद्धापूर्वक वंदना की। तथा रामटेक, श्री अंतरीक्ष पार्श्वनाथ, काशी, द्वारिका, श्री कुंथलगिरि आदि तीर्थो की वंदना यात्रा कर अपनी बोधि को दृढ़तम बनाया। सम्मेदशिखर की यात्रा की तथा राजगृही, पावापुर, सेठसुदर्शन पवित्र स्थान गुलजार बाग पटना आदि की यात्रा कर आरा में एक रईस देवकुमार जी ने वैराग्य में विशेषता उत्पन्न करने के लिए ३२ श्री जिन मंदिरों के भक्तिपूर्वक दर्शन कराये।

वे बड़े तपस्वी थे और सात दिन के बाद आहार लेते थे, शेष दिन उपवास में व्यतीत करते थे। यह क्रम उनका जीवन भर रहा। आहार में वे एक ही वस्तु ग्रहण करते थे। प्रायः जंगल में रहा करते थे। जब वे गन्ने का रस लेते थे तब वे गन्ने के रस के सिवाय अन्य पदार्थ ग्रहण नहीं करते थे। उनमें बड़ी शक्ति थी। आम की ऋतु में यदि आम के रस का आहार मिला तो वे उस पर ही निर्भर रहते थे दूसरी वस्तु नहीं लेते थे वे आध्यात्मिक पदों को सुनाया

करते थे। वे भोज में आते थे और जब आचार्य शान्तिसागरजी (गृहस्थावस्था में) के घर आहार होता था। उनको आहार दान देते थे उनके कमंडल में पानी भरते थे। उस दिन वे वहीं ठहरते थे वहां ही रात्रि व्यतीत करते थे। उनकी वैयावृत्ति सेवा करते थे। उनके पास सोते थे। दूसरे दिन उनको दूध गंगा, वेद गंगा नदी के संगम के पास पहुंचाते थे। बाद में उन्हें अपने कन्धे पर बैठाकर नदी के पार ले जाते थे। एक उन्नत काय वाले पुरुष को अपने कन्धे पर बैठाकर ले जाने में कष्ट नहीं होता था। जैसे कोई गृहस्थ एक बालक को अपने कन्धे पर बैठाकर नदी पार ले जाने के समान मालुम पड़ता था। वास्तव में उनकी शरीर सम्पत्ति अपूर्व थी। उनके साथ रहा करते थे। उनकी तपस्या से प्रभावित थे। वे कहते हमने ऐलक शिक्षा उनसे ही ली थी। (आचार्यरत्न देशभूषणजी महाराज का पावन चरित्र लेखक वलभद्र जैन सम्पादक दिव्यध्वनी मासिक) एक बार उनकी गुफा में शेर आया था उसके आने पर भय का संचार नहीं हुआ। परिक्रमा, दर्शन और नमस्कार करके कुछ देर बाद वह चला गया।

आपकी आयु की वृद्धि के साथ साथ रत्नत्रय वृद्धि हुई। आपके दिव्योपदेश से महान प्रभावना हुई। मिथ्यात्व का त्याग कराया। हिंसा के तांडव नृत्य को दूर किया। निर्दोष मुनि मार्ग का प्रतिपादन किया। सरकार को मुनियों को, संस्थाओं को सुखद आदेश दिये। अनेक भव्य प्राणियों ने दीक्षा ली। सम्यग्दर्शनाचार, ज्ञानाचार, चरित्राचार, तपाचार और वीर्याचार का स्वयं तो पालन करते ही थे साथ ही शिष्यों को भी पालन करवाते थे। आपको आचार्य पद जयसिंहपुर में श्रुतपंचमी सन १९१५ को चतुर्विध संघ ने दिया। अंकली ग्राम में सन उन्नीस सौ सोलह में पंच कल्याणक प्रतिष्ठा हुई थी उस समय समाज के गणमान्य महानुभावों ने चारित्र चकवर्ती पद प्रदान किया था। आपका चतुर्विध संघ बडा था। उनका ज्ञान, ध्यान, तप तीर्थकर के समान था। वे मुनिकुंजर समाधि सम्राट महातपस्वी आचार्य कहलाते थे। इसी प्रकार अन्य उपाधियों से विभूषित थे। आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज द्वारा वंदित, दक्षिण भारत के वयोवृद्ध, दिगम्बर संत, आदर्श तपस्वी, अप्रतिम उपसर्ग विजेता, महामुनि, आचार्य आदिसागर जी महाराज (अंकलीकर) (देखो सम्यग्ज्ञान वर्ष १४—८७ अंक १—२पृ० १६) का कुंभोज के पहाड पर शक् सं० १८४२ माघ शुक्ला १४ को बाहुवलि की गुफा में अतिशय ध्यान करते थे उस दिन इतना ध्यान लगा कि शरीर भिन्न और आत्मा भिन्न इस प्रकार आत्मिक प्रवल सुभावना सा महानंद हर्ष सुख का अनुभव हुआ। मेरा आत्मा शरीर से

भिन्न हुआ ऐसा ध्यान कर अवर्णनीय स्वानुभुति जन्य आत्मसाक्षात्कार होने से जो आनंद हुआ वह नागेन्द्र अहमिंद्र को भी नहीं है। तथा दण्ड, कपाट, प्रतर, लोकपूरण का उस आत्मा में विचार ध्यान करने से महासुख हुआ। किन्तु जब शरीर में आए तब महा कष्ट का आभास हुआ। ध्यान के प्रभाव से और णमोकार पंच के माहात्म्य से महाराज के तालुरंध्र से अमृत झरता था। वह इतना मिष्ट, इतना गाढा, इतना सुख प्रिय होता था कि घी मिश्री भी कोई वस्तु नहीं है। ऐसा चमत्कार और आश्चर्य होता था। जब वे स्वल्प दूध और फल लेंकर भी उपवास करते थे तब उनके उस समय कण्ठ से अमृत झरता था। स्वत प्रत्यक्ष दिखाकर कहते थे कि देखो यह कण्ठ से अमृत झरता है यह इतना स्वादिष्ट और सुखप्रद है कि वर्णनातीत है। मुझे महा आनंद आता है। केवल शरीर रूपी मुर्दे को लेकर फिरता हूं। संक्केशरहित होकर आनंद से इस मुर्दे को छोडने का प्रयत्न करता हूं। हे भगवान् ! कब इस शरीर का त्याग कर आत्मा का सुख प्राप्त होगा इस प्रकार की उत्कृष्ट भावना प्रतिदिन वृद्धि को प्राप्त होती गई। रात्रि में भी सामायिक करते थे। निद्रा अतिशसय कम थी। सतत समाधि की चिंता जागृम थी। सरलस्वभावी भोले चतुर्थकाल के साधु जो मन में सोचते थे वही करते थे। श्री सेठ लक्ष्मण भरमप्पा आखाडे की दान पूजा में पतीती थी। उनकी भक्ति के फलस्वरूप दक्षिण उत्तर भारत में उन्हें ये आदर्श जिनमुनि महा समाधि सम्राट चारित्र चक्रवर्ती मुनि कुंजर दिगम्बराचार्य श्री आदिसागर जी महाराज अंकलीकर प्राप्त हुए। इस कराल कालिकाल में ये अपूर्व निधि सिद्ध हुए। उच्च श्रेणी की प्रबल भावना से केवल। श्री समाधि का उघोग धारावाही अखण्ड करते थे। और शरीर मुर्दे को कहां तक धारण करूं। अब बस ! एवं ऐसा अभिप्राय धारण कर निर्जनवन में निराधार गुफा में एकाकी कठोर तप करते थे। शिर के केशों का लोंच करते समय केशों की राशि को देखकर लोग आश्चर्य करते थे।

शीतकाल में नदी के किनारे उष्णकाल में उष्ण शिला पर और चातुर्मास में वृक्षमूल में ध्यान करते थे। कभी कभी अंतराय के कारण ८–९ दिनों के बाद भिक्षा करते थे। भिक्षा शांत समाधान चित्त से करते थे। ध्यानाध्ययन करते रहते थे। रात्रि में भी खडे होकर अथवा बैठकर कुंभोज आदि की गुपफाओं में ध्यान करते रहते थे। गाढ आत्म श्रद्धा थी। किसी भी प्रकार का भय नहीं था। परन्तु विशेषता यह रहती थी कि केवल संक्केश परिणाम न होने का प्रयत्न हो तो हर्ष होता था। ध्यान और चरित्र उच्च कोटि पर पहुंच रहा था। देवयोग से एक क्षुल्लक जी आए। भावनाभव नाशिनी। योग्य उपादान

और योग्य निमित्त मिल गया। यथा गुरू तथा शिष्य का मिलन हुआ। आपास में गुरू ने शिष्य को और शिष्य ने गुरू को पहचाना। क्षुल्लक जी को उत्तर भारत में उनके योग्य गुरू न मिल सका। अतः दक्षिण भारत में प० पू० चारित्र चक्रवर्ती मुनि कुंजर समाधि सम्राट दिगम्बराचार्य श्री आदिसागर जी अंकलीकर से उन क्षुल्लक जी ने आर्य दीक्षा ग्रहण की तहनंतर ता० १७–३–४३ को ३२ वर्ष की अवस्था में सम्वत १९९९ में उहगांव में मुनिदीक्षा ग्रहण की। नामकरण महावीर कीर्ति किया गया। दोनों की भावना फलीभूत हुई। जिन खोजा तिन पाइया की कहावत को साकार रूप दिया। गुरू चरणों में रहकर गुरूत्व की योग्यता प्राप्त की। गुरू ने चातुर्मास में अपना आचार्य पद दे दिया था। और चातुर्मास के पश्चात् प्रायश्चित्तसमुच्चय ग्रन्थ पढने की आज्ञा दे दी। और जब उनकी दृष्टि कम होने लगी तो उनको आहार विहार में कठिनाई होने लगी। तब उन्होंने मुनिचर्या के पालन में बाधा समझकर बिना किसी रोग के समाधिमरण का नियम ले लिया था और चारों प्रकार के आहार का त्याग कर दिया और सल्लेखना का निर्णय ले लिया।

सल्लेखन महोत्सव बहुत प्रभावशाली हुआ था। सल्लेखना ग्रहण करते समय धर्म प्रेमी गृहस्थों ने सर्वत्र सल्लेखना की खबर करवाई थी। प्रतिदिन पंचामृत अभिषेक पूजा शांति मंत्र वगैरहा दिनचर्या शुरू की तब बहुत दूर दूर के लोग अपने अपने परिवार सहित आ गये। उस समय एक भारी प्रमाण में मेला हो गया था। चर्तुसंघ मुनि यति ऋषि अनकार एंव मुनि, आर्यिका, श्रावक श्राविकाएं इनका समूह जम गया था। प्रतिदिन धर्मोपदेश जप जाप्ये समाधि का महत्व वगैरह विषयों की तत्व चर्चा होती थी।

क्षपक के पुन्य प्रभाव से दिग्देशस्थ समस्त जैन लोगों का अपूर्व ही मेला भर गया था। रोज भजन, पूजन सदुपदेश होते थे। कार्यक्रम की व्यस्तता के कारण दिन घंटे के समान निकल रहे थे। महाराज श्री का शरीर कृश होने लगा किन्तु आत्मबल उत्तरोत्तर वृद्धिंगत हुआ तब समग्र चतुराहार का त्याग किया। तब कुछ जैनेतरजों ने पुलिस को खबर करदी कि प०पू० चारित्र चकवर्ती मुनि कुंजर समाधि सम्राट दिगम्बर जैनाचार्य श्री आदिसागर महाराज अंकलीकर आत्म हत्या कर रहे हैं। तत्काल पुलिस पहुंच गई। और उन्होंने अपने कानून का हवाला देकर उन्हें आहार गृहण करने के लिए बाध्य करना चाहा परन्तु आगम के ज्ञाता पारगामी वीर शिरोमीणी क्षयकराज के अत्यन्त

मिष्ट सरल और प्रिय वाणी में उन्हें आत्महत्या और सल्लेखना का अन्तर बताया।

दिगम्बर जैन परम्परा की इस अनौखी चमत्कारी अद्वितीय साधना को ज्ञात कर सबको आश्चर्य हुआ और वे उन क्षपकराज के चरणों में नमस्कार कर चले गये। वे आचार्य परमेष्ठी से बहुत प्रभावित हुए। फलतः सरकार की ओर से मिरज, सांगली, कोल्हापुर, आदि से आने वाली ट्रेने (रेलगाड़ियाँ) फ्री छोड़ दी गईं। दर्शकों का तांता वर्षाकालीन बादलों की भाँति उमड़ पड़ा। ऊदगॉव का कुंज वन नन्दनवन बन गया। सभी साधुगण पैदल चलकर क्षपकराज की सेवा में उपस्थित हो गये। आचार्य शांतिसागरजी, आचार्य देशभूषणजी, राष्ट्रसंत आचार्य विद्यानन्दजी महाराज भी उपस्थित थे। चारों ओर उस समय पिच्छीधारी विचरण करते हुए दिखाई दे रहे थे। उस वातावरण में चारित्र चक्रवर्ती मुनि कुंजर समाधि सम्राट महातपस्वी आचार्य श्री आदिसागरजी महाराज (अंकलीकर) आत्मस्वरूप में लीन थे। शरीर पीड़ा उन्हें रंचमात्र भी चलायमान नहीं कर सकी। अन्त तक चेहरे पर अपरिमित शांति, ओठों पर मधुर मुस्कान, नयनों में कांति बनी रही। महामंत्र पंचपरमेष्ठी का जाप ही मात्र उनका शरीर आधार था। निराकुलचित्तवृत्ति थी। इस प्रकार उन्होंने बिना अन्न पानी ग्रहण किए बहुत शांति ओर सावधानी से १४ दिन व्यतीत कर ऊदगॉव की टेकरी पर शरीर त्याग दिया। (महामंत्री अ०भा०दि० जैन महासभा, नई सड़क दिल्ली)। वह १४ दिन की यत्र सल्लेखना द्वारा ऊदगॉव (कुंजवन)में २१ फरवरी फाल्गुन वदी १३ सन् १६४४ के नामोच्चारण स्वशुद्धत्मचिंतन के साथ रात्रि के २ बजे सल्लेखना समाधिमरण पूर्ण किया। अर्थात नश्वर शरीरं का परित्याग किया।

जिस क्षण आपने पार्थिव शरीर छोड़ा था। उस समय देवकृत चमत्कार हुए। संस्तर वाली गुफा में एक विद्युत सा प्रकाश हुआ। वह प्रकाश पुंज आकाश मार्ग से निकल गया और आधे घन्टे तक अत्यन्त मधुर कर्णप्रिय वादियों की ध्वनी आकाश में होती रही। पुनः जयध्वनी के साथ बन्द हो गई। उपस्थित सभी दर्शकों ने इसे सुना ओर आश्चर्य से भर गये तथा जय जयकार करते हुए सबने गुरूदेव के पार्थिव निर्जीव शरीर की वन्दना की। अनेक साधु श्रावक श्राविकाएं अर्जिकाए एंव बहुत बड़ी संख्या में जैनेतर लोग उपस्थित थे। इस कुल का पवित्र उज्जवल यश युग युगान्तर तक धरातल पर बना रहे। आगमानुसार आचरण शुद्धि ध्यान रखकर वर्तन करने वाले शिष्य

वर्ग से यह कुल सदा शोभित रहे। इसी भावना के साथ उन बीसवीं सदी के सर्व प्रथम चारित्र चकवर्ती मुनि कुंजर समाधि सम्राट महातपस्वी दिगम्बराचार्य वीतरागी श्री आदिसागरजी (अंकलीकर) के चरणों में त्रिकाल सतत नमोऽस्तु नमोस्तु!! नमोस्तु!!!

परम पूज्य बीसवीं सदी के सर्वप्रथम चारित्र चक्रवर्ती मुनि कुंजर समाधि सम्राट आचार्य आदिसागरजी अंकलीकर महाराज कहते थे :—

(१) शुद्र मरण समय में भी मुनि नहीं बन सकता।

(२) ५–६ काल के जन्में जीवों के कमक्षयणा नहीं होती है।

(३) देवशास्त्र गुरू की परीक्षा करना प्रथम कर्तव्य है।

(४) पंचमकाल में भरत क्षेत्र आर्यखण्ड में अवधि ज्ञानी एंव ऋषिधारी मुनि हो सकते है।

(५) साम्य, स्वास्थ्य, समाधि, योग, चित्तनिरोध, शुद्धोपयोग ये एकार्थवाची हैं।

(६) संघ के कार्य से वर्षाकाल में १२ योजन जाने पर्यन्त शुद्ध हैं, दुषित नहीं।

(७) ६ वें गुणस्थान से ७ वें गुणस्थान का काल आधा हैं।

(८) ग्रास मुख में रखकर चबाते समय ७ वां गुणस्थान हो सकता हैं।

(९) आर्यिका उत्तम पात्र है।

(१०) आर्यिका संयम से युक्त है।

(११) ग्वाले शूद्र या नीच कुल वाले होते हैं ऐसा नियम नहीं है।

(१२) रत्नत्रय की पूर्णता १३ वें गुण स्थान में होती है।

(१३) आयु का धर्माधर्मादि द्रव्यों का एक क्षेत्रावयाही सम्बन्ध हैं।

(१४) शुद्ध द्रव्य में अगुरू लघु गुण के कारण वर्तना होती है।

(१५) विभव परिणमन में द्रव्य कर्म कारण है।

(१६) जघन्य रत्नत्रय बंध का कारण है।

(१७) शुभ भावों से कर्म निर्जरा भी होती है।

(१८) पंचम गुण स्थानवर्ती सभी प्रतिभाधारी एवं आर्यिकाओं के ५१ प्रकृतियों का संवर समान होता है हीनाधिका नहीं।

(१९) अरहंत नमस्कार तत्कालीन बंध की अपेक्षा असंख्यात गुणी निर्जरा का कारण है। इसलिये उसमें मुनियों की प्रवृत्ति होती है।

(२०) दो, तीन, चार गुण स्थानों में भी संवरतत्व पाया जाता है।

(२१) व्रत कर्मों की निर्जरा में असंख्यात गुणी श्रेणी निर्जरा का कारण है।

(२२) चेतना है, अनुभव करता है, उपलब्ध करता है, वेदता है, ये एकार्थ वाचक हैं क्योंकि चेतना अनुभूति, उपलब्धि और वेदना का एक अर्थ है।

(२३) अनुभूति ज्ञान की पर्याय है।

(२४) मिथ्यात्व सहित क्षायोपशत्रिक ज्ञान को अज्ञान कहते हैं।

(२५) जीव द्रव्य की पर्याय है। द्रव्य की प्रत्येक पर्याय क्रम से होती है। क्रम भावी को पर्याय कहते हैं किन्तु प्रत्येक पर्याय का कालनियत है या अनियत ऐसा एकान्त नहीं है। आत्म द्रव्य काल नय से जिसकी सिद्धि समय पर आधार रखती है। गर्मी के दिनों के अनुसार पकनेवाले आम्रफल की तरह। आत्मद्रव्य अकालनय से जिसकी सिद्धि समय पर आधार नहीं रखती, कृत्रिम गर्मी से पकाये गये आम्रफल के समान।

(२६) अन्त का अर्थ धर्म होता है। आगमार्थ प्राचीन आचार्यों का अर्थ ग्राह्य है।

(२७) स्याद्वाद सब वस्तु के साधने वाला एक निर्बाध अर्हत्सर्वज्ञ का शासन है।

(२८) आगम तर्क का विषय नहीं है सर्वज्ञ के वचन को आगम कहते हैं।

(२९) जो भेद से, विकल्प से, पर्याय से कथन करे वह व्यवहार नय है।

(३०) मिथ्या व्यवहार नय और निरपेक्ष निश्चय नय का कथन करने वाले व्यवहार नय को अभूतार्थ कहते हैं।

(३१) निश्चय नय सापेक्ष व्यवहार नय सम्याव्यवहार नय प्रयोजनवान भूतार्थ है।

(३२) निक्षेप विषय और नाय विषयी है।

(३३) एक तीर्थकंर में एक का भी संकल्प और चौबीस का भी संकल्प संभव है और प्रतिभा के चिन्ह प्रतिभा के चरण चौकी में नामादि व्यवहार के लिए हैं।

(३४) अरहंत परमात्मा स्वरूप की अपेक्षा एकरूप और नामादि की अपेक्षा अनेकस्वरूप हैं।

(३५) सत्यार्थ ज्ञान स्वभव तथा रत्नत्रपरूप से वीतराग भाव से पंचपरमेष्ठी रूप एक ही प्रतिभा समझना चाहिए।

(३६) अक्षर का अर्थ केवल ज्ञान है।

(३७) अनुभूति का अर्थ प्रतीति श्रद्धा है, चेतना वेदना है, स्वानुभव जानना है, दर्शनोपयोग है।

(३८) खटास से युक्त पेय को कांजी कहते हैं। जैसे इमली आदि का पानी या तक्र आदि।

(३९) शील का अर्थ आत्मा का वीतराग भाव है।

(४०) दशवें गुण स्थान तक सूक्ष्म राग रहता है, वहां तक निर्ग्रंथ मुनि को कुशील संज्ञा है।

(४१) अनंतानुवंधी चतुष्क के पर प्रकृतिरूप से परिणमा देने को विसंयोजना

कहते हैं।

(४२) द्रव्यार्थिकनय से सामायिक और पर्यायार्थिक नय से छे दोयस्थापना संयम है।

(४३) जन्म संतति के नाश का अर्थ संसार एवं कर्म निर्वहण का नाश कर्मों का नाश है।

(४४) जीव शब्द से वहिरात्मा, अंतरात्मा एवं परमात्मा तथा अंतरात्माशब्द से सम्यादृष्टि ग्रहण किये जाते हैं।

(४५) ज्ञान सामान्य से अभिप्राय ज्ञान के अभिमार्गा परिच्छेद से हैं।

(४६) अपने उददेश्य से बनाये गये आहार को उंछिष्ट्ाहार कहते हैं।

(४७) आत्मा को शुभ से पुण्य से रक्षा करता है वह पाप कहलाता है।

(४८) पुण्य उदय में अशुभ भावों से पाप बांधना पापानुवंधी पुण्य है।

(४६) पाप के उदय में अशुभभावों से पाप बांधना पापानुबंधी पाप है।

(५०) पुण्य के उदय में शुभभावों से पुण्य बांधना पुण्यानुबंधी पुण्य है।

(५१) पाप के उदय में शुभभावों से पुण्य वांधना पुण्यानुबंधी पाप है।

(५२) पृथक्त्व का अर्थ बहुत है।

(५३) प्रतिगण धर का अर्थ समान गणधर है।

(५४) पातनिका शब्द का अर्थ भूमिका है।

(५५) प्रदेश का अर्थ स्कंध का चौथाई भाग है। प्रदेश का अर्थ पुद्गल परमाणु के द्वारा रोका गया आकाश का क्षेत्र है।

(५६) प्रस्तार का अर्थ पटल है।

(५७) गुणों में अनुराग भक्ति है। रूचि होना श्रद्धा है भक्ति हर समय नहीं रहती लेकिन श्रद्धा हर समय रहती है।

(५८) भाव परमाणु का अर्थ पर्याय की सूक्ष्मता है।

(५६) अंतिम आवली को मदणावलि कहते हैं।

(६०) योग के पलटने को योग संकांति कहते हैं।

(६१) मोह शब्द से दर्शनमोह एव रागशब्द से चारित्र मोह समझना चाहिए।

(६२) असंख्यात योजन का एक राजू हो जाता है।

(६३) लब्धि का अर्थ लाभ है।

(६४) जहां छहों द्रव्य हो वह लोक है।

(६५) अलग-अलग शिलाओं में अरहंतादि पांच लोकपाल (पंच परमेष्ठी) की प्रतिभाऐं बनाना शैल कर्म है। जिन मंदिरादि की चंद्रशलादिकों में अभिन्न रूप से प्रतिमास बनाना गृहकर्म है। भीतों में अभिन्नरूप से पांच लोकपाल (पंचपरमेष्ठी) की प्रतिभाएं बनाना भित्ति कर्म है।

(६६) विडंवना का अर्थ विकारी चेष्टा है।
(६७) व्रत संयम, चारित्र, स्थूल दृष्टि से एकार्थवाची चाहिए।
(६८) सक्केश शब्द से विशुद्धि की हीनता जाननी चाहिए।
(६६) दर्शनोपयोग को सम्यग्दर्शन एवं सम्यतत्व गुण का कार्य श्रद्धान है।
(७०) आकूतम शब्द से वक्ता का अभिप्राय जानना चाहिए।
(७१) पर्याय का अर्थ गुण एवं धर्म है।
(७२) आधुनिक आगम भी प्रमाण है।
(७३) अपने वित्त के अनुसार देवपूजा कराना चाहिए।
(७४) पाचंवें गुण स्थान तक नीच गोत्र का उदय होता है।
(७५) द्रव्य स्त्री के साडी होने से पांचवां गुणस्थान तक ही होता है।
(७६) दर्शन मोह से मोह उत्पन्न होता है। एवं चारित्र मोह से क्षोभ उत्पन्न होता है।
(७७) धर्म ध्यान आत्मस्वभाव के लिए स्थित है।
(७८) गुणी पुरूष के दुख को निर्दोष पने से दूर करना अथवा रोगादि से व्याकुल साधु के विषय में जो किया जाता है। वह वैयावृत्ति है।
(७६) भरत क्षेत्र में पंचम काल में साधुओं के धर्माध्यान होता है, आत्मस्वभाव में स्थित होते हैं ऐसा जो नहीं मानना वह अज्ञानी है।
(८०) अप्रशस्त वचन कहना असत्य है जिससे प्राणी को पीडा होती है वह अप्रशस्त है।
(८१) परम पुण्य के अतिशय से तथा चारित्र रूप पुरुषार्थ से मोक्ष की प्राप्ति होती है।
(८२) वहिरात्मा एवं अंतरात्मा पर समय तथा परमात्मा स्वस मय है। वहिरात्मा पाप जीव और अंतरात्मा पुण्य जीव है।
(८३) सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र से तीर्थंकर प्रकृति आदि का बंध होता है।
(८४) सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र से बंध नहीं होता है।
(८५) द्रव्य का अर्थ सामान्य, उत्सर्ग अनुवृत्ति है। इसका विषय द्रव्यार्थिक नय या दृष्टि है। पर्याय का अर्थ विशेष , या अपवाद या व्यावृत्ति है। इसका विषय र्यायार्थिक नय या दृष्टि है।
(८६) जिस वस्तु का जो स्वरूप है उसका वैसा श्रद्धान सम्यग्दर्शन होता है।
(८७) जीव अजीव द्रव्य हैं और आश्रवादि।
(८८) जिससे आत्मा पवित्र होती है वह पुण्य है। पुण्य, मंगल, पुण्यपूत, शिव, शुभ, कल्याण, मृदु, सोख्य इत्यादि पर्यायवाची हैं।

(८६) छह द्रव्य पांच अस्ति काय सात तत्व इत्यादि भावों में बर्तन करता है वह शुभ भाव है।

(६०) वहिरात्मा पाप जीव, अंतरात्मा पुण्य जीव, परमात्मा पुण्य पाप से रहित जीव हैं।

(६१) गृहस्थ को शुभ भाव के संयोग से शुद्धात्मा का अनुभव संभव है।

(६२) चर्ममय नेत्र से भी आपका दर्शन होने पर वह पुण्य प्राप्त होता है जो भविष्य में केवल दर्शन और केवल ज्ञान को उत्पन्न करता है।

(६३) षट्खंडागम में भाव मार्गणा का निरूपण है।

(६४) समयसार में एकत्व विभक्त आत्मा का कथन है।

(६५) शुभऔर अशुभ मोक्ष और बंध का मार्ग है।

(६६) प्रथम काल के समान वर्तना देवगति एंव देवकुरू उत्तर कुरू में होती हैं।

(६७) दूसरे काल के समान वर्तैनाहरि एवं सम्यक क्षेत्र में होती है।

(६८) तीसरे काल के समान वर्तना हैमवत हैरण्यवत में होती है।

(६६) चतुर्थ काल के समान वर्तना विदेह क्षेत्र में होती है।

(१००) पांचवा काल के समान वर्तना अर्ध स्वयं रमण द्वीप एवं संपूर्ण स्वयं भू रमण समुद्र तथ भरत, ऐरावत क्षेत्र के ५—५ मलेच्छ खण्डों में और विधाधरों श्रेणियों में होती है।

(१०१) छटवें काल के समान वर्तना मनुष्य एवं निर्यंच गति में होती है।

(१०२) गृहस्थ अवस्था में दान पूजादिक को और तपोधन अवस्था में षडावश्यकादिक को छोडते हैं वे गृहस्थावस्था और तपोधन अवस्था दोनों अवस्थाओं से भ्रष्ट होते हुए रहते हैं यह दूषण ही है।

(१०३) बालक के एक वर्ष का होने पर व्युक्ति नाम की किया की जाती है इस किया का दूसरा नाम वर्ष वर्धन या वर्षगांठ है। इंसमें विधिवत् दान देना, जिनपूजा करनी चाहिए और इष्ट बंधुओं को बुलाकर भोजन आदि कराना चाहिए।

(१०४) एक बार विवाह किया हो, व्रतशील आदि सद्गणों वाला हो, गर्भाधानादि कियाओं से सहित हो। कृषि के द्वारा आजीविका करता हो वह सच्छूद्र कहलाता है।

(१०५) सच्छूद्र विधिपूर्वक, शील, उपवास, दान और अणुव्रत ग्रहण की कियाएं विधि पूर्वक करता है।

(१०६) जिनकी पिण्ड शुद्धि का अभाव है, मध, मांस आदि का सेवन करता है, सेवा आदि नीच वृत्ति होने से शूद्रों का संस्कार नहीं होता है।

(१०७) सम्यग्दृष्टि ज्ञान वैराग्य की भावना पूर्वक समय व्यतीत करता है।
(१०८) आचार्यादि गुरूओं की चरण पादुका अथवा विंव प्रतिष्ठापित करनी चाहिए।
(१०६) यह मैं हूं ऐसी अनुभूति होती है।
(११०) रागी सम्यग्दृष्टि नही होती है।
(१११) शुद्धात्मा की प्राप्ति होने पर ही संवर होता है।
(११२) अध्यात्म ग्रंथों में पांचवें गुणस्थान से ऊपर के गुणस्थान वालों के वीतदाग सम्यदृष्टि की मुख्यता है। सराग सम्यग्दृष्टि के गौणरूप से प्रवृत्ति होती है। वह परिणमन आगम भाषा में औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक ये तीनों भाव होते हैं। अध्यात्म भाषा में शुद्धात्मा के अभिमुखपरिणाम शुद्धोपयोग, निर्विकल्प, स्वसंवेदन, समाधि, निश्चय सम्यक्तव, अभेद रत्नत्रय इत्यादि पर्याय के नाम को प्राप्त होता है।
(११३) ज्ञान, संहनन, स्वात्म भावनासे बलवान हो, बहुत काल का दीक्षित हो ऐसा एकल विहोरी श्रुतज्ञान में माना गया है।
(११४) पुनर्विवाह करने से, पिंडशुद्धि का अभाव होने से, ऋतु धर्म आदि श्रेष्ठ कियाओं का अभाव होने से मोक्षमार्ग नहीं होता।
(११५) उत्तम तीनों वर्ण वाले आपस में विवाह और पंक्ति भोजन करना चाहिए और शुद्रों को शूद्र के साथ विवाह और पंक्ति भोजन करना चाहिए।
(११६) बिना पीछी वाले को निर्वाण की प्राप्ति नहीं हों।
(११७) छेदन भेदन करना, वधबंधन करना, ताडना या जलाना यापानी लाना, घर साफ करना या घर को लीपना, सम्मार्जन करना, भित्ती लीपना या भित्ती को साफ करना ये ६ प्रकार का आरंभ होता है।
(११८) १०८ आचार्य के गुण। १० धर्म, १० आलोचना गुण , १० प्रायश्चित्त गुण, १० स्थिति कल्प, ८११६ दर्शनाचार, ८ ज्ञानाचार, ८ आचार वत्वादि गुण, ७ विशेष गुण, ६ जीतगुण, ६ आवश्यक, ५ महाव्रत, ५ समिति, ३ गुप्ति होते हैं।
(११६) १०८ प्रकार का संवर २ व्युत्सर्ग, ३ गुप्ति, ४ विनय, ४ शुक्कध्यान, ५ समिति, ५ स्वाध्याय, ६ प्रायश्चित, १० धर्म ध्यान, १२ तप, १२ अनुप्रेक्षा, २२ परीषह है।
(१२०) ७ भय, ८ मद , ४ संज्ञा, ३ गारव, ३३ आसादना, २ रागद्वेष, ५७ प्रमाद (आस्रव)
(१२१) ६ इन्द्रियां, ४ स्त्री, ३ कृतादि, ३ कृतादि, ३ मनादि इनका आपस में

गुणा करने पर २१६ भेद ब्रह्मचर्य के हो जाते हैं।

(१२२) किन परिणामों से कौनसी पर्याय प्राप्त होती है। मायाचारी से कुत्ता, महामायाचारी से खरगोश, कोध से बाह्य महा कोध से सिंह, मान से मछली , महमान से सर्प, रौद्र ध्यान से भेरूंड, महारोद्र ध्यान से ऊँ, गुणियों की निंदा से सूकर, कुमार्ग से मुर्गी, सद्धर्म के द्वेष से हिरण, जाति के मान से विलावख विधा के मद से धुग्धु, तप के मद से कुत्ता, ऐश्वर्य के मद से मगर रूप के मद से गधा, ऋद्धि के मद से घोडा, चुगली करने से रीछ, हिंसानंद से बकरी, सप्त व्यसन के सेवन करने से घोडा या कुत्ता निरंतर सप्त व्यसन के सेवन से जंगली कुत्ता।

(१२३) श्रावक के लिए पुत्र कल यादि चेतन, आभूषणादि अचेतन, सामरण स्त्री पुत्र आदि मिश्र परिग्रह हैं। साधु के लिए शिष्यादि चेतन, पिच्छी कुमंडलु पुस्तक अचेतन, सोपकरणी शिष्य मिश्र परिग्रह है। भाव की दृष्टि से मिथ्यात्व रागादि चेतन, द्रव्यकर्म — नोकर्म अचेतन, द्रव्यभाव कर्म मिश्र परिग्रह है। वीतरागी की अपेक्षा सिद्धे का ध्यान चेतन, पुद्गलादि विचार अचेतन, मार्गणा—गुणस्थान, जीवस्थानादि रूप संसारी जीव का विचार मिश्र परिग्रह है।

(१२४) दीक्षा के समय में शिव शब्द का उच्चारण स्वशु द्धात्मानुभव में जो सुख होता है जिनवर वीतरागी निर्विकल्प समाधिरत जीव को होता है वही सुख उसको प्राप्त होता है।

(१२५) ऋषि, मुनि,यति, अनगार यह चतुर्विध संघ कहलाता है। अवधि, मनः पर्यय, केवल ज्ञानी ये मुनि हैं, ऋद्धि प्राप्त साधु ऋषि हैं, श्रेणी आरूढ़ यति हैं, गृह त्यागी साधु अनगार हैं। विक्रिया और अक्षीण ऋद्धि वाले राजर्षि हैं, औषध और बुद्धि ऋद्धि वाले ब्रह्मर्षि हैं, आकाशगामी ऋद्धि वाले देवर्षि हैं, केवल ज्ञानी परमर्षि हैं। या मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका ये चतुर्विध संघ हैं।

(१२६) अपकर्ष के ८ समय होते हैं मुज्यमान आयु ६५६१ हैं तब अपकर्षण (१) २१८७ (२) ७२६ (३) २४३ (४) ८१ (५) २७ (६) ६ (७) ३ (८) १ होता हैं।

(१२७) ५६ कुमारी देवियॉं इंद्रानि–कल्पवासिनी १२, भवनवासिनि २०, व्यंतर १६, चंद्रमा १, सूर्य १, कुलाचल ६ होती हैं।

(१२८) ७ प्रकार के केवली (१) तीन कल्याणकवाले (२) दो कल्याणक वाले (३) पांच कल्याणक वाले (४) सामान्य केवली (५) मूक केवली (६) अंतकृत केवली (७) उपसर्ग केवली (८) सातिशय केवली होते हैं।

(१२६) कौन कितने दिन गर्भ में रहता है। बंदर २ माह, कुत्ता ३ माह, बकरी ६ माह, कबूतरी ६ दिन, गाय १० माह, भैंस ११ माह, घोड़ी १२ माह, ऊँट १३ माह, हाथी १८ माह, मुर्गी १० दिन।

(१३०) ऐंद्री, विजया, परमा, स्वाये ४ जाति होती हैं।

(१३१) सद्दृष्टि, श्रद्धा, गुण प्रीति, दृष्टि, दर्शन, सम्यग्दर्शन, धर्म, सम्यक, निर्मोह, जिनेंद्रभक्त स्पष्ट दृष्ट, दृष्टया सुनिश्चितार्था, दर्शन शरणा, जिनभक्त ये सम्यग्दर्शन के पर्यायवाची हैं।

(१३२) कहीं किसी कारण से कुल में दोष लग जाने पर राजा आदि की संमति से कुल को शुद्ध करना चाहिए।

(१३३) भगवान आदिनाथ का राज्याभिषेक आषाढ़ कृष्णा १ को हुआ।

(१३४) मनुष्य क्रोध में अंधा, मान में बहरा, माया में गूँगा, लोभ में नकटा हो जाता है।

(१३५) संवेग, प्रशम, धीरता, रखना, गर्व नहीं करना, मूढ़ता नहीं करना, आस्तिक्य और दया ये सम्यग्दयर्शन की भावना हैं।

(१३६) धैर्य,क्षमा,ध्यान, और परीषह सहन करना ये उत्तर भावना हैं।

(१३७) समयसार, तत्वार्थ सूत्र, आदि सिद्धान्त ग्रंथ गृहस्थों को नहीं पढ़ना चाहिए।

(१३८) प्रामृत, तत्वार्थ, सिद्धांत आदि काज जहां शुद्ध अशुद्ध जीवादि षट् द्रव्यादिकों का मुख्य वृत्ति का वयाख्यान है। वह द्रव्यानु योग कहलाता है।

(१३९) व्रतीश्रावक सन्यास पूर्वक मरण करना उसका सूतक नहीं होता है।

(१४०) गृहस्थ को मोक्ष कहना मिथ्या वचन है।

(१४१) जिनमत में मुनि का स्वररूप नग्न दिगम्बर कहा गया है।

(१४२) व्यवहार पूर्वक निश्चय होता है।

(१४३) निश्चय चारित्र शुद्धोपयोगी मुनि के ही होता है।

(१४४) चतुर्थ गुणस्थान में मिथ्या नय पक्ष छूट जाता है और शुभ व्यवहार शुभोपयोग रहता हैं। यदि एकान्त नये पक्ष नहीं छूटता तो चौथा गुण स्थान ही नहीं।

(१४५) निश्चय एकान्त वादियों के तो चथुर्त गुणस्थान ही नहीं होता है। मिथ्यात्व गुण स्थान ही रहता है नरक निगोद जाते हैं। संसार में ही भ्रमण करता है।

(१४६) अवर्णवाद करने वाले के ७० कोड़ा कोड़ी सागर की स्थिति का बंध होता है।

(१४७) मिथ्यात्व का प्रवर्तन एंव समर्थन करने वाला निमय से निगोद जाता है।

(१४८) कोन से कर्म के अभाव से कौन दोष दूर होता है। ज्ञानावरणी के अभाव से आश्चर्य, चिंता/दर्शनाबर्णी के अभाव से निद्रा वेदनीय कर्म के अभाव से क्षुधा, पिपासा/मोहनीय कर्म के अभाव से राग, द्वेष, मोह, शोक, अरति /नाम कर्म के अभाव से जरा रोग। गोत्र कर्म के अभाव से स्मय/आयु कर्म के अभाव से जन्म,मरण/अंतराय कर्म के अभाव से स्वेद, खेद/दोषों का अभाव होता हैं।

(१४९) एक बार विवाह का व्यवहार जिनमें होता है वे सच्छूद्र हैं।

(१५०) प्रातिहार्यो से सहित सम्पूर्ण शुभ अवयवों वाली वीतरागता के भाव से पूर्ण अर्हत् का बिंब करना चाहिए। प्राप्ति हार्यो से रहित सिद्धों की शुभ प्रतिमा होती हैं। आचार्यो,उपाध्यायों, साधुओं की प्रतिमाह भी आगमानुसार बनानी चाहिए। वरदहस्त सहित आचार्य, शास्त्र सहित उपाध्याय, केवल पीछी कमण्डलु सहित साधु की प्रतिमा होती हैं।

(१५२) जिनेन्द्र कथित आगम का पूर्वापर संदर्भ मिलाते हुए अनुकूल व्याख्यान करने को अनुयोग कहते हैं।

(१५२) उत्सर्पिणी काल में नारद और रूद्र नहीं होते।

(१५३) पंचम काली के अन्त में प्रथम धर्म का, पुनः राजा का और फिर अग्नि का नाश होता है। अर्थात प्रातः धर्म का, मध्याम्ह राजा का और संध्या समय अग्नि का अभाव होगा।

(१५४) द्रव्यानुयोग सशुद्धापयोग ७ से १२ गुणस्थान तक, करणानुयोग से ११ वें गुणस्थान से होता है।

(१५५) सिद्धान्त और आगम में क्या भेंद है ? कोई भी निश्चित या सिद्धमत सिद्धान्त कहा जाता है किन्तु आगम वहीं सिद्धान्त है जो आप्त वाक्य है और पूर्व परम्परा से आया है। सिद्धान्त सामान्य संज्ञा है और आगम विशेष/आगम हें हेतुवाद नहीं चलता है क्योंकि आगम मात्र अनुमान की अपेक्षा नहीं रखता है यह आप्त वचन होने से प्रत्यक्ष के बराबर का प्रमाण माना गया है। आगमस्य अतर्कगोचरत्वात् ऐसा कहा भी हैं।

(१५६) तीसरे तक मिथ्यात्व, चौथे से कषाय सातवें से बुद्धिपूर्वक कषाय का अभाव होता है इसलिए श्रेणी आरोहण में शुक्लध्यान होता हैं।

प०पू० चारित्र चकवर्ती, मुनिकुंजर समाधि सम्राट् १०८ आचार्य आंदिसागरजी अंकलीकर के समाधि काल में सम्बोधनार्थ, तीर्थभक्तशिरोमणि स०स० १०८ आचार्य महावीर कीर्तिजी महाराज द्वारा रचित अष्टक :–

(१) क्षुत्तृष्णामयशोकमोहजननातंक स्मयैर्वर्जितः !

देवेन्द्रैरमिपूजितो हमसमो राजेन्द्रसंपूजितः !!

सिद्धोऽहं निजशुद्धभावसहितो श्री केवलज्ञानभाक्

स्वात्मानं सुखाकरो बलमयो सद् धैर्य सच्छीलभाक् !!

रागद्वेष्मदमोह रहित हूं जन्ममरण आश्चर्य नहीं

क्षुधातृषाविह्मय नहिं मेरा, रोग शोक का नाम नहीं

इन्द्रचन्द्र अहमिन्द्र पूजते, क्या नरेन्द्र क्या असुरपति

सिद्धस्वरूपी स्वयं आत्मा, केवलज्ञानी जगतपति।।

अनन्तसुखों का आकरहंसा, धैर्यतीर्य सच्छील मयी

समझों आतमनित्य निरंजन, ध्यानयोग्य यह सकलमयी।।१।।

अन्वयार्थ–(अहं) मैं

(क्षुत्–तृष्णा–आमय–शोक–मोह–जनन–आंतक–स्मयै) भूख, प्यास, रोग, शोक, जन्म व्याधिविशेष और अहंकार भाव से रहित (देवेन्द्रैः) देवेन्द्रों के द्वारा (अभिपूजितो) सवर्तः अथवा मन वचन कार्य रूप त्रियोग की विशुद्धता पूर्वक विशेष रूप से पूजित (असमो) असाधारण है। (राजेन्द्रसंपूजितः) चक्रवर्ती आदि राजा महाराजाओं से अर्चित (निज शुद्धभाव सहितो) अपने स्वाभाविक उपाधिरहित विशुद्ध गुणा पर्यायों से सहित (श्रीकेवल ज्ञान भांक) केवल ज्ञान रूप श्रेष्ठ संपत्ति के अधिपति–स्वामी (अनन्त– सुख– आकरो) अनन्त सुख का भंडार (बलमयो) बलयुक्त, अनन्त शक्ति से युक्त, शक्ति स्वरूप (सद्धैर्य–सत्शील भाक) समीचीन–यथार्थ श्रेष्ठ धैर्य शक्तियुक्त श्रेश्ठ शीलयुत (स्वात्म) अपनी

यह आत्मा (सिद्धो) सिद्धस्वरूप है— (ऐसा मानता हूँ।)

अर्थ—मैं भूख, प्यास, रोग शोक मोह जन्म आंतक—व्याधिविशेष तथा अंहकारादि विकारों से रहित हूं, देवेन्द्रों के द्वारा की गई असाधारण पूजा से युक्त हूं, विशेष रूप से पूजित ह चक्रवर्ती आदि श्रेष्ठ राजाओं से भी अर्चित हूं, अपने आत्मिक शुद्ध भावों से—गुण पर्यायों से सहित हूं, केवल ज्ञान रूप वैभव से युक्त हूं, निज आत्मिक अनन्त सुखों का खजाना हूं, बलशाली—शक्ति सम्पन्न हूं, सम्यक् धैर्य से सहित हूं, सम्यग्दर्शन रूप परिणति से धैर्य गुण भी परिपक्व होता है, उसमें समीचीनता आती हैं। यह बात यहां सत् धैर्य शब्द से प्रगट की गई है। मैं उत्तम शील गुणा सहित हूं, यहां उत्तमशील शब्द को यथाख्यात चारित्र तथा अठारह हजार शील के भेंदों का सूचक जानना चाहिए। अपने गुरूदेव के निर्यापकाचार्य होकर उन्हें आत्म बोध करा रहे हैं।

(२) शुद्धोऽहं परमात्मरूपरचितः शुभ्रैर्गुणैर्राजितः

दृष्टा सर्वभुविप्रसिद्धमहिमा योगीन्द्रवृन्दार्चितः

ध्यात्वा श्री मुनि आदिसागर रविः शान्त्या समाधि थ्रित !!

शुद्ध स्वरूपी परमानन्दी शुभ्रगुणों से राजित हैं

दृष्टा सर्व जगत के स्वामी, योगीन्द्रों से अर्चित हैं

अनन्त चतुष्टय गुण से राजित सिद्ध शिला अधिवासी हैं

आदिसागर सूरि ने ध्याकर, शान्त समाधिधारी हैं।।२।।

अन्वयार्थ—(शुद्धोऽहं) मैं शुद्ध हूं (परमात्मरूप रचितः) परमात्मस्वरूप जो रचना उसमें रचित (शुभ्रैः गुणैःराजितः) शुभ अर्थात उत्तम गुणों से शोभित)दृष्टा) देखने वाला या दर्शन गुण से युक्त (सर्वभुवि) सम्पूर्ण पृथ्वीमंडल पर (प्रसिद्धमहिमा) प्रसिद्ध महिमा वाला, प्रख्सयात। (योगीन्द्रवृन्द—अर्चितः) योगीन्द्र समुदाय से पूजित हूं। (सिद्ध—अनन्तचतुष्टय—अन्वित विभुः) स्वाभाविक—स्वमाविसिद्ध अनन्त ज्ञान, दर्शन, सुख और वीर्य रूप अनन्त चतुष्टय युक्त परम परमात्मा हूं (श्री) आत्म वैभव स्वरूप या रत्नत्रय स्वरूप हूं

(सिद्धशैलस्थितो) सिद्धशिलापर स्थित हूं (इस प्रकार) (ध्यात्वा) ध्यानकर (श्रीमुनि) मुनिजनों के लिए आदर्श स्वरूप (आदिसागर रविः) आचार्य आदिसागर ने (शान्त्या) समताभाव से, शान्तपरिणामों से (समाधि) समाधि। को (श्रितः) आश्रय बनाया या प्राप्त किया।

अर्थ–मैं शुद्ध हूं, स्वभावसिद्ध–स्वाभाविक अनन्तज्ञान दर्शन सुख और वीर्य रूप अनन्त चतुष्टय युक्त विभु–परमात्मा हूं, मैं श्री– रत्नत्रयरूपलक्ष्मी का धारी होने से श्री स्वरूप हूं, सिद्धशिला पर स्थित हूं, ऐसा ध्यान कर अनुंकरणीय स्वरूप मुनिराज आचार्य परमेष्ठी आदिसागरजी ने शान्तिपूर्वक समाधि का आश्रय लिया। श्लोक के अन्तिम चरण में प्रस्तुत रवि शब्द आचार्य अर्थ का बोधक है। (संस्कृत हिन्दी कोष)

(३) सन्यास। दिवसान्चतुर्दशबुंधः हर्षात् गृहीत्वा स्वयं

रात्रौ चापि सुधर्मचिन्तन परः ध्यानं चकृत्वा ध्रुवम्

आयाते समये समाधिमरणे आर्षा कियासंचरन्

शिष्टात्मा शुचिरादिसागरमुनिः शान्त्या समाधिं श्रितः !!

सन्यासधरकर दिवस चतुर्दश, हर्षित होकर बिता दिये।

रात्रिकाल में धर्मध्यानयुत, आत्मध्यान में सजग रहे

समय समाधि निकट समझकर, आर्षमार्ग का शरण लिया

शिष्टशुद्ध श्री आदि सिन्धु मुनि, शान्त समाधिमरण किया।।३।।

अन्वयार्थ –(बुधः) बुद्धिमान (शिष्टात्मा) शिष्ट–जिनशासन से सुसंस्कृत आत्मा शिष्टात्मा (शुचिः) आचार्य (आदिसागर मुनिः) आदिसागर महाराज ने (हर्षात्) हर्ष से (स्वयं) स्वेच्छा से, स्वतः (दिवसान् चतुर्दश) चौदह दिन पर्यन्त (सन्यास) भक्त प्रत्याख्यान कर, सन्यास– (गृहीत्वा) ग्रहण कर (रात्रौ च अपि) रात और दिन (सुधर्मचिन्तनपरः) उत्तम क्षमादि श्रेष्ठ आत्म धर्म के विचार में तत्पर (ध्यानं) धर्म्यध्यान कर्के (ध्रु) दृढ़ मजबूत (कृत्वा) कर (समाधिमरणे समये

आयाते) समाधिमरण का समय आने पर (आर्षकिया) महर्षियों से संप्राप्त आर्षकिया—शास्त्रोक्त किया (संचरन्) करते हुए (शान्त्या) शान्ति पूर्वक (समाधि) समाधि को (श्रितः) आश्रय बनाया, अर्थात समाधि की। अर्थ—बुद्धिशाली जिनशासन से सुसंस्कृत शिष्टात्मा आचार्य आदिसागर जी महाराज (अंकलीकर) ने सहर्ष स्वेच्छापूर्वक चौदह दिन के भक्त प्रत्याख्यान पूर्वक सन्यास धारण किया। भोजनपान—चारों प्रकार के आहार के त्याग रूप सन्यास को ग्रहणकर दिन रात उत्तम क्षमादि श्रेष्ठ आत्म धर्मो के विचर में तत्पर रहकर, धर्मध्यान को सुदृढ़ कर, समाधिमरण का समय आने पर महर्षियों से संप्राप्त आर्ष क्रिया—शास्त्रोक्त किया करते हुए शान्तिपूर्वक समाधि सिद्ध की। प्रस्तु श्लोक में शुचि शब्द का अर्थ आचार्य है— (संस्कृत हिन्दी कोष)

शान्तिपूर्वक समाधि। सिद्ध की,समाधि का आश्रय लिया। प्रस्तु श्लोक में शुचि शब्द का अर्थ आचार्य है। —(संस्कृत हिन्दी कोष)

(४) श्री चैत्यं जिननायकस्य विमलं लोकोत्तरं मंगलम्

श्री शुक्लहष दैव कल्पित विभुं श्रीपार्श्वनाथं जिनं

भाले हस्तयुंग निधाय शिरसा नत्वा च दृष्ट्वा मुहुः

ध्यात्वा श्री बुध आदिसागर मुनिः शान्त्या समाधि श्रितः!!४!!

प्रतिमा शुभ्र फटिक सम निर्मल, लोकोत्तर मंगलकारी

जिनवरकल्पित पार्श्वप्रभु की, छवि लखी तब सुखकारी

हस्तयुगल रखकर मस्तक पर, नमनकिया बारंबार

आदिसिन्धु गुरू ध्यान लगाकर, मरण समाधिको धारा।।४।।

अन्वय— (श्री बुध) सम्यकज्ञान रूपी लक्ष्मी के धारी आचार्य (आदिहसागर मुनिः) आदिसागरजी मुनि राज ने (विमलं) घातिचतुष्क रूप मल से रहित (लोकोत्तरं) अलौकिक (मंगलं) पिापपुन्ज को गलाने वाले मंगलस्वरूप (जिन नायकस्य श्री चैत्यं) जिनेन्द्र प्रभु के वैभवशाली चैत्य को (नत्वा) नमस्कार कर

(श्री शुक्लहषद –एंव कल्पित) सुन्दर अकेले सफेद पाषाण से रचित निर्मित (श्रीपार्श्वनाथजिनं) श्री पार्श्वप्रभु जिनदेव को (हस्तयुगं भाले निधाय) दोनो हॉथों को मस्तक पर रखकर (शिरसा नत्वा) मस्तक झुकाकर (दृष्टवा च) और दर्शन कर (नत्वा मुहुः) पुनःपुनः नमस्कार कर (शान्त्या) शान्तभाव से, साम्य भाव पूर्वक (समाधि श्रितः) समाधि का आश्रय लिया।

अर्थ–सम्यक्ज्ञान रूपी लक्ष्मी के धारी आचार्य आदि सागरजी महाराज घातिकर्म रूप पापमल से रहित, अलौकिक–तीन लोक के प्राणिवर्गो में अद्वितिय स्थान को प्राप्त , पाप पुन्ज को गलाने वाले मंगल स्वरूप जिनेन्द्र प्रभु के वैभव शाली चैत्य को नमस्कार कर सुन्दर मात्र शुक्ल पाषाण से निर्मित श्री पार्श्वदेव के जिनबिम्ब को देखकर दोनो हॉथों को मस्तक पर रखकर बार बार नमस्कार कर शान्त परिणाम से समता भाव पूर्वक समाधिस्थ हुए।

प्रस्तुत श्लोक में बुंध शब्द आचार्य अर्थ का बोधक हैं।

(५) मंत्रं पन्चनमस्क्रियात्मकमलं सर्वे पठन्ति स्म वै

श्रुत्वा हर्षभरः प्रसन्नवदनः ध्याने दृढ़ो भावतः।

पायं पायमहो विशुद्वमनसा धर्म्यं शिवं मंगलम्

श्री योगीश्वर आदिसागर मुनिः सिद्धां समाधि श्रित :!!

अपराजित यह महामंत्र, मुनियों ने इसका ध्यान किया

सुनकर हर्षित चित्त हुए, गुरूवर ने दृढ़ हो ध्यान धरा।।

मंगलकारी शिवसुखदायी, धर्मामृत को श्रवण किया

योगिराज श्री आदि सूरि ने, सकल समाधि मरण किंया।।५।।

(सर्वे) सभी –चतुर्विध संघ) (अमलं) पवित्र,निर्मल (पायं पायं) प्ररक्षक–जल के समान संरक्षक (धर्म्यं) आत्मधर्म बोधक (शिवं) परम कल्याणकारी (मंगलं) पाप रूप घातिकर्म के नाशक (पन्चनमस्क्रियात्मकं मंत्रं) प चनमस्कार मंत्र को

(पठन्ति स्म) पढ़ रहे थे। (हर्षभरः) आनन्दानुभव से भरे हुए (प्रसन्नवदनः) प्रसन्न मुखाकृतिवाले (श्री–योगीश्वरः) तपरूपी लक्ष्मी के धारक यतिपति क्षपकराज–आचार्य परमेष्ठ (मुनि–आदिसागरः) मुनि आदिसागरजी (विशुद्धमनसा) विकल्प जाल रहित–कषाय रहित शुद्ध मन से (तंश्रुत्वा) उसे सुनकर (सिद्धां) प्रसिद्ध जिनागम से सुसिद्ध (समाधि) समाधि का अथवा पण्डितमरण का (श्रितः) आश्रय ले रहे थे।

अर्थ – समाधिकाल में उपस्थित मुनि आर्यिका श्रावक श्राविकायें क्षपक राज के समीप पवित्र, निर्मल, जल से समान संरक्षक , प्ररक्षक, आत्म धर्म बोधक, परम कल्याणकारी, पाप रूप घातिकर्म के नाशक पंच नमस्कार मंत्र को पढ़ रहे थे। आनन्दानुभव से भरे हुए, प्रसन्नमुखाकृति वाले तपरूपी लक्ष्मी के धारक यतिपति क्षपकराज–आचार्य परमेष्ठी मुनि आदिसागरजी, विकल्पजाल रहित शुद्धमन से उस महामंत्र को सुनकर प्रसिद्ध –जिनागम से सिद्धसमाधि का आश्रय ले रहे थे। प्रस्तुत श्लोक में योगीश्वर पद आचार्य अर्थ का बोधक है।

(६) चिन्ताशोक भ्यांतकादिरहितां क्लेशादिभिर्वर्जितां !

हिक्काशान्तिकरीं प्रबोधजननीं धींरा गभीरां शुभां

आयाते निकटे समाधिमरणे सौभाग्य संसाधिकां

पुण्यात्यावर आदिसागर मुनिःपूतां समाधिं श्रितः!!

चिन्ताशोक भ्यादिक हारे, क्लेशताप संकट सारे

श्वॉसकाश लेश न व्यापे, याद दिलावे निजगुण के।।

धीर वीर गंभीर बनावे, मरण निकट जिस क्षण आवे

पुण्यपुरूष श्री आदि सूरि, सौभाग्यकारी वह दिन मानें।।६।।

अन्वयार्थ –(समाधिमरणे) समाधिमरण के (आयाते निकटे) निकट आने पर (पुण्यात्मावर) पुण्यशाली मुनिजनों में श्रेष्ठ, मुनियुंगव आचार्य परमेष्ठी

(आदिसागर मुनिः) आदिसागरजी महाराज ने (चिन्ता रहितां) वाध्य विकल्प जाल रहित (शोक रहितां) अनुग्रहकारी मित्रों के वियोग से उत्पन्न हुए दुःखों से विहीन (भय रहितां) इहलोक परलोकादिसप्तभ्यों से रहित (अंतकआदि रहितां) मृत्यु रहित—आगामी मरण या अपमृत्यु से रहित। (क्लेशादिभिः वर्जितां) पापबंध के कारण रूप क्लेशभाव से रहित (हिक्काशान्तिकरीं) हिचकी आदि को शान्त करने वाली, उपलक्षण अर्थ से मरणकालीन समस्त वेदनाओं से मुक्त करने वाली (प्रबोध जननीं) भेद विज्ञान रूप सम्यग्ज्ञान को जागृत करने वाली (धींरा गभीरां शुभां) धीर, गंभीर, शुभ (सोभग्य संसाधिका।) सौभाग्य स्वरूप स्वर्ग और मोक्ष की सम्यक् प्रकार सिद्धि कराने वाली (पूतां) पवित्र (समाधि श्रितः) समाधि का आश्रय लिया।

अर्थ— समाधिमरण के निकट आने पर पुण्यशाली मुनिजनों में श्रेष्ठ मुनि पुंगव आचार्य परमेष्ठी आदिसागरजी महाहराज ने—बाह्य विकल्प जाल से रहित अनुग्रहकाहरी मित्रों के वियोग से उत्पन्न दुःखों से रहित, इहलोक परलोकादि सप्त भायों से रहित, अपमृत्यु व आगामी मरण रहित पापबंध के कारण रूप क्लेश रहित, हिचकी आदि को शान्त करने वाली तथा उपलक्षण से मरणकालीन समस्त वेदनाओं से मुक्त करने वाली भेद विज्ञान रूप सम्यज्ञान को जागृत करने वाली धीर,गंभीर शुभ सोभाग्य स्वरूप और मोक्ष की सम्यक् प्रकार सिद्ध कराने वाली उत्तम समाधि का आश्रय लिया।

(७) स्वाद्यं खाद्यमथान्नजं च सकलं लोह्यं च पेचादिकम्

सर्वं दयमसाररूपकमिदं आजन्महित्वा जगत्

एक त्रयादिभवेषु मोक्षजननीं संसार रोगापहां

श्री चिन्तामणि रादिसागरयातिः चिन्त्यां समाधिं श्रितः।।

खाद्य स्वाद्य अरू लेह पेय सब, जीवन भर को त्याग दिया

संसार भेग अरू देह गेह की, क्षणभंगुरता समझ लिया

एक तीन या दो भव अन्दर, मोक्षपुरी पहुंचाती है

चिन्तामणि श्री आदि सिन्धुयति, वही समाधिधारी हैं।।७।।

अन्वयार्थ– (श्री चिन्तामणिरादिसागरयतिः) चिन्तामण्यिारत्न के समान चिंतित वैभव को देने वाले श्री आदिसागरजी यतिराज ने (स्वाद्य) स्वाद्य–सौफं इलायची तांबूलादि स्वद्य वस्तुओं को (स्वाद्यं) रोटी पूड़ी कचौड़ी आदि खाद्य सामग्री को (अन्नजं) गेहूँ चावलादि नव धान्य से बने पदार्थ को (लेह्यं) मलाई रबड़ी आदि चाटकर खाने योग्य पदार्थ को (पेयं) मट्ठा दूधादि पदार्थ को (च)और (सकलं असाररूपकं) सर्वतःअसार—सारहीन (देयं)त्याज्य (इंद सर्वं जगत्) इस सम्पूर्ण जगत् को (आजन्म)जीवन पर्यन्त के लिए (हित्वा) छोड़कर (एकत्रयादिसवेषु) एक तीन आदि भ्वों में (संसाररोगापहां)संसार रोग को हरण करने वाली (मोक्ष जननीं) मोक्ष देने वाली (चिन्त्यां) चिन्तवन करने योग्य (समाधिं श्रितः) समाधिका आश्रय लिया।

अर्थ–चिन्तामणिरत्न के सामन चिन्तित वैभव को देने वाले श्री आदिसागरजी यतिराज ने, स्वाद्य–सौंफ इलायची आदि पदार्थो को, रोटी पूड़ी कचौरी आदि खाद्य पदार्थो को, चावल गेहूँ आदि नवधान्य से बने भोजन मलाई रबड़ी आदिह चाटकर खाने योग्य पदार्थो को तथा मट्ठा,दूध जलादि पेय पदार्थो को तथा सारहीन त्याज्य इस सम्पूर्ण लगत को जन्मपर्यन्त छोड़कर एक दो या तीन भवों में संसार रोग को हरण करने वाली मोक्ष को देने वाली, चिन्तवन करने योग्य उत्तम समाधि का आश्रय लिया।

(८) पन्चाचार परायणः सुविमलः स्वर्मोक्षसंदेशकः

आत्मध्यानरतः प्रशान्तवदनः नृसुरेन्द्राद्यर्चितः।

बाह्याभ्यन्तर संगमोहरहितः मुनिकंजरः निस्पृहः

दत्वा सूरिपंद मयि सुविधिना निश्चिंत्य समाधिं श्रितः।।

सुरनरमुनिजन अर्चा करते पन्चाचार परायण की

बाह्याभ्यन्तर संग तजा जिन वेष दिगम्बर धारी की

आत्मध्यान में लीन हर्षयुक्त, मुनिकुजर सम्राट हुए

महावीर कीर्ति को निज पद देकर, सिद्ध समाधि प्राप्त किये।।८।।

अन्वयार्थ –(पिंचाचार परायणः) दर्शनाचार,ज्ञानाचार, चारित्राचार, तपाचार, वीर्याचार, इन पॉच आचारों का पालन करने और कराने में निपुण (सुविमलः) अतिचार अनाचार अतिकम व्यक्तिकमादि मल से पूर्णतः रहित (स्वर्मोक्ष संदेशकः) स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति का उपाय बताने वाले (आत्मध्यानरतः) निजात्मा का ध्यान करने में अनुरक्त (प्रशान्तवदनः) नरेन्द्र सुरेन्द्रादि से पूजित (बाह्याभ्यन्तर संग मोह रहितः) बाय और अभ्यन्तर सभी प्रकार के परिगृहों से रहित–मूर्च्छा भाव रहित (निस्पृहः) स्पृहा रहित–संसार शरीर भोगों से उदासीन (मुनिकंजरः) मुनियों में प्रधान–आचार्य आदिसागरजी ने (सुविधिना) आगभोक्त विधि से (मयि) मुझ पर–मुझ योग्यशिष्य मुनि महावीर कीर्ति पर (समाधिग्रहण के पूर्व) (सूरिपंद दत्वा) अपना आचार्य पद प्रदान कर (निश्चित्य) निर्विकल्प होकर शांन्ति पूर्वक (समाधिं श्रितः) समाधि का आश्रय लिया, समाधि ग्रहण की।

अर्थ–दर्शनाचार,ज्ञानाचार,तपाचार,वीर्याचार, चारित्राचार इन पॉच आचारों का पालन करने और कराने में निपुण,अतिचार अनाचार,अतिकम,व्यतिकम आदि मल से पूर्णतः रहित, स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति का उपाय बताने वाले, निज आत्म स्वरूप के चिन्तन में अनुरक्त,राग द्वेष के उद्रेक से रहित, परम शान्त मुखाकृति वाले नरेन्द्र सुरेन्द्रादि से पूजित, बाह्याम्यन्तर परिग्र रहित, मोह–मूर्च्छा भाव रहित, वान्छा रहित–संसार शरीर भोगों से उदासीन मुनियों में प्रधान आचार्य श्री आदिसागरजी महाराज (अंकलीकर) ने आगमोक्त विधि से मुझे (स्वशिष्यमुनि महावीर कीर्ति को) आचार्य पद प्रदान कर निर्विकल्प होकर समाधि की पंण्डितमरण पूर्वक शरीर का परित्याग किया।

परम पूज्य मुनीकुंजर समाधि सम्राट आचार्य श्री महागुरू देवाधिदेव श्री १०८ श्री आदिसागरजी महाराज (अंकलीकर) के पास आर्य व निर्ग्रंथ दीक्षा ली थी अतः मेरे (आचार्य महावीर कीर्तिजी महाराज के) लिए दिव्योपदेशामृत।

(१) स्वस्थ सरल पर्यंकासन से बैठना दोनों आंखों को मींचना और एकाग्रता से एकांत में ध्यान करना।

(२) दक्षिण देश में ऊदगॉव,नांदनी, समझडोली, शेरगॉव, जैनवाड़ी, कुंभोज, अकंली, वोरगॉव, सदलगा, वेड़किहाल, शेडवाल, हल–हिंगिणी? तेरदाल, गोकाक, कोनूर, मांगूर, शिरदवाड़ आदि स्थानों मे। मुनि निवास (गुफाएं) हैं। इन स्थानों में जैनियों के गुरूनिर्ग्रंथ साधुओं को कोई उपसर्ग नहीं होता है और आत्म ध्यान विशेष रीति से होता है। यदि सुख शांति प्राप्त होगी तो केवल स्वस्थ ध्यान से ही होगी, तालुरंध्र से जैसे मेरे को अमृत झरता है वैसे ही तुम को भि झरने लगेगा। मात्र आत्म ध्यान धाराव ही होना चाहिए।

(३) यदि निर्ग्रंथ दीक्षा लीकर आत्म दर्शन साक्षात्कार नहीं किया तो पीछी कमंडलु लेना समूल व्यर्थ हैं।

(४) भिक्ष समाधान भाव से लेना चाहिए। इस देश में प्रायः भिाक्षा स्त्रियां कराती हैं। सो इस देश में रहे तो उन श्राविकाओं के हाथ का आहार लेना पड़ेगा। णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं इस णमोकार मंत्र को २७ बार जपने से सर्व विकार शांत हो जाते हैं। इस मंत्र के प्रभाव से अमृत झरता है। प्रायः बड़े बड़े शहरों मे। विहार नहीं करना चाहिए।

(५) मन को मारना चाहिए व १ + २ + ३ यथा शक्ति उपवास करने का अभ्यास करा दिया था तथा आत्मा भिन्न का विशेष ध्यान करना चाहिए। कर्मो के साथ धैर्य पूर्वक युद्ध करना चाहिए।

(६) उत्तर हिन्दुस्थान को गये तो छोटे छोटे ग्रामों में रहकर उत्तम ध्यान करना। निद्रा जप करना चाहिए। तुम स्वंय शास्त्र पढ़ हो तथा "प्रायश्चित्त समुच्चय" शास्त्र पढ़ने का तुम को अधिकार देते हैं। तथा आगमानुसार चलना चाहिए। अपना आचार्य पद चतुर्मास में दे दिया। स्त्री

संगति से दूर रहना चाहिए। दुनियॉ की मानगड़ में नही पड़ना। ध्यान और अध्ययन करना। विशेषतः एकांत स्थान में रहना तुम्हारी प्रकृति का अब कोई नहीं मिलेगा तो ठीक है अन्यथा एकाकी भी रह सकोगे। सांगली में धार्मिक लक्षण है और राजा भी धर्मप्रिय है। सो समझना ब्रह्मसूरि को क्षुल्लक दीक्षा देना यह तुम्हारे पास है हम तो समाधि का निर्णय कर चुके हैं।

(आचार्य महावीर कीर्ति जी की हस्तलिखित डायरी से लिखा है)

परम पूज्य चारित्र चकवर्ती मुनि कुंजर समाधि सम्राट, आचार्य आदिसागरजी अंकलीकर के आचार्य पदारोहरण के समय की गई प्रतिज्ञाएं जिनका निर्वाह समाधिपर्यन्तं किया।

महोपसर्ग प्राण विसर्जनेशं कायां शिष्यादि वर्गस्य चिंता विहाय स्वात्म सिद्धौ महा प्रयत्नां विधेयः कार्यः। शक्ति : प्रतिज्ञा। पर समाधि यथशक्ति जिनाज्ञानुसारेण शरणागत स्याभिमुखस्य स्व समाधिभ्यासों यदि कश्चित् सुपात्रः धर्म प्रभावनादिः श्री बाहुबलि सम्मेद शिखरादि सिद्धादि तीर्थयात्रार्थ प्रयत्नोऽपि शास्य दृष्टया कर्तव्यःशिष्य मन जनानां प्रतिबोधः। यथावसरं यथोचित कार्य एंव।

इत्यापि प्रितिज्ञा शिष्यादि वर्णस्य चारित्र रक्षणार्थ। उत्तमात्य चिंताच मध्यमा। काम चिंताऽध्मा प्रोक्ता, परचिंता धमाधमा।। शक्तेवहिर्गतः साहसो न विधेयः। स्वमनसः कर्तव्यः पाखण्डित्वं जलपत्वं जहाभि।

(आचार्य महावीर कीर्ति महाराज की हस्तलिखित डायरी से)

परम पूज्य चारित्र चकवर्ती मुनि कंजर समाधि सम्राट आचार्य आदिसागर जी अंकलीकर के दीक्षा के समय के विचार जिनको जीवन पर्यन्त निर्वाह किया।

(१) निरतिचार ध्यान करणे।

(२) कोध लोभ आहार ची इच्छा सोड़णे आहारासन निद्रा जयः

(३) निद्रा जयः। बड़ी शास्यावली वा अन्य शास्यांत स्वतः अनुभवाये प्रयोग करणे। ५ महाव्रत, ५ समिति, ५ इंद्रिय निरोध, ६ आवश्यक, ७ विशेष गुण, द्वादश तप, दशधा धर्मजुत पालैपंचाचार। षडावश्यक त्रिगुप्ति ये आचारज पद सार।।

निराहारोऽहं। निराकारोऽहं। स्वात्मैव शरणं। रहस्य शास्यानुसार व श्री जिनेश्वराज्ञानुसार चलणें। नित्यभविकार सुस्थिता स्वोपदेशे श्री देशभूषण कुलभूषण दर्शन शुद्धात्मा। न स्त्री, न नपुंसको, न पुमान्, नैव पुण्य पापमयः।। अन्योन मम शरणं , शरणं एंव स्व परमात्मा। आदि शब्देन "सिद्धिः स्वात्योपलब्धि द्रव्य

भाव शुद्धिः। संकल्प विकल्प त्यागः। समाधि साधना विधेया। स्वात्य दर्शनं। ध्यानाध्ययनपोः न कोपंः प्रमाद। न करिष्यामीति।

पठतु सकल शास्य विविक्त शप्पासनेन। शुद्धमौनान्यनः सिद्धिर्वा। वहिर्कर्तृत्वं त्यज। आखाड़े मण्डली मम आहार समात सेवी कारणानां परमाचरणं। स्वात्यशुद्धिः। सकल मणि विहायाह्नाय चिच्छक्तिरिक्तं। आदशोऽयं श्री वाहुवलि महावीरो मुनिः। प्रयत्नोविधेयः।

शुचि प्रसन्नः अधोकीलित नेचाभ्यां प्रसन्नः। स्वमिथ्यात्वं त्यज श्री कुंथलगिरि उपवासः। श्री देशभूषण कुलभूषणादर्शः।

(आचार्य महावीर कीर्ति महाराज की हस्तलिखित डायरी से)

आचार्य शांति सागर महाराज का परिचय

ये वेलगांव जिले के भोजगाँव (तहसील चिकौडी) के निवासी थे। उनके पिता पाटिल 'यायाधीश ' भीमगौडा थे और माता का नाम ' देवी सत्यवतीं सत्यभामा थी। दोनों पति पत्नि अत्यंत धर्म परायण थे। आचार्य महाराज अपने पिता के तृतीय पुत्र थे। इनके बचपन का नाम सातगौडा था। आपका जन्म आषाढ शुक्ला ६ वि० सं० १८२८ में शुभ लग्न और शुभ नक्षत्र में हुआ था। आपकी बचपन धर्म में रूचि थी। पांच वर्ष की अवस्था से ही आप नियमित रूप से जिन मंदिर और शास्त्र सभा में जाने लगे थे। इन्हें प्रारंभ से ही खेल कूद आदि में रूचि नहीं थी। पिता—माता इन पर विशेष प्रेम रखते थे। प्रेमवश आपका विवाह ६ वर्ष की अल्पायु में ही कर दिया और विवाह के ६ माह पश्चात् ही आपकी बाल पत्नि का देहान्त हो गया।

यधपि आपकी आयु ६ वर्ष की थी। किन्तु वय की अपेक्षा ज्ञान अधिक था। पत्नि के वियोग का दुख हुआ और इस घटना से उन में वैराग्यवृत्ति बढ गई। पिता ने दुवारा विवाह करने का आग्रह किया किन्तु आपने उसे स्वीकार नहीं किया, बल्कि मुनिसिद्ध सागर जी के समीप आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया।

कुछ दिन बाद आप कुछ मित्रों के साथ सम्मेद शिखर जी चाचा को गये। मार्ग में आपका कोई साथी थक जाता तो उसे आप कंधे पर ले जा कर यात्रा कराते थे। एक साथी को पूरी वंदना अपने कंधे पर बैठाकर ही कराई। ऐसी थी आपकी शारीरिक शक्ति।

आपने अपनी अंतिम वंदना के समय पार्श्वनाथ टोंक पर सदैव के लिए घृत, तेल, का जीवन पर्यंत के लिए त्याग कर दिया। सं० १८६१ में घर पर जाकर आपने आजीवन एक बार भोजन का नियम ले लिया। जब आपकी अवस्था ३७ वर्ष की हुई, तब आपने ४ वर्ष तक एक दिन के बाद आहरा का नियम ले लिया। सं० १८७० में आपने मुनि देवेंन्द्र कीर्ति जी से क्षुल्लक के व्रत ग्रहण किये। सं० १८७४ में कुंभोज बाहुवलि पर मुनि कुंजर आचार्य आदि सागर जी (अंकलीकर) से ऐलक दीक्षा ली। सं० १८७६ में मुनिराज पाय सागर जी महाराज से आपने मुनि दीक्षा ले ली। उस समय आपका नाम शांति सागर रखा गया।

आपके प्रमुख शिष्यों में मुनि श्री पाय सागरजी, वीरसागर जी, नेमिसागर जी, चंद्रसागर जी, कुंथुसागर जी, नमिसागर जी, श्रुतसागर जी, वर्धमान सागर जी, देवसागर जी पद्मसागर जी, आदिसागर जी (शेडवालकर) सुधर्मसागर जी, नेमिसागर जी (पुत्तूरकर), धर्मसागर जी, अनंतकीर्ति जी, पार्श्व कीर्ति जी, चंद्रसागर जी (पुत्तूरकर), और समंतभद्र जी महाराज हैं जिन्हं निर्ग्रंथ मुनि दीक्षा दी।

जब महाराज का नौवां चतुर्मास कुंभोज बाहुवलि में हो रहा था उस समय आपके दर्शनों के लिए बंबई के सेठ घासीराम पूनमचंद जी पधारे। उन्होंने आपसे निवेदन किया। महाराज! मेरी इच्छा संघ को सम्मेदशिखर जी ले जाने की है यदि आप स्वीकार कर तो उत्तर भारत का भी आपके कारण अज्ञान अंधकार दूर हो जाय। महाराज ने विचार कर स्वीकृति दे दी। फलतः सं० १९८४ में संघ सम्मेदशिखर जी की यात्रा को गया। मार्ग में अनेक स्थानों पर जैनतर समाज और सरकार की ओंरे से मुनियों नग्न विहार का विरोध हुआ। कई स्थानों पर लोगों ने संघ के ऊपर उपसर्ग भी किये। किन्तु आचार्य महाराज की तपस्या और दृढता से सभी उपसर्ग दूर होते गये।

महाराज का विहार गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, आंध्रपदेश, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश, दिल्ली आदि प्रांतों में हुआ। इस विहार में अनेकों महत्वपूर्ण कार्य हुए।

एक दिन आचार्य महाराज ने स्वयं कहा हम इन्द्रियों का तो निग्रह कर चुके हैं। हमारा चालीस वर्ष का अनुभव है, सभी इंद्रियां हमारे मन के आधीन हो गई हैं। वे हम पर अपना हुकुम नहीं चलाती हैं। अब संयम का पालन करना हमारे लिए कठिन हो गया है, कारण नेत्रों की ज्योति मंद हो रही है अतः अब सल्लेखना की शरण लेनी पडेगी।

इमहाराज ने अपनी इस भावना को अंत में पूरा किया। उन्होंने १४ अगस्त १९५५ को सल्लेखनाले ली। १८ सितम्बर १९५५ को वे अनंत समाधि में लीन हो गये। मुनिराज देश भूषण कुलभूषणं की निर्वाण भूमि कुंथलगिरि इस युग के इस महर्षि की ३६ दिन की सल्लेखना से एक बार फिर पुरातन वैभव को धारण कर सकी। इन दिनों में महाराज ने पहले दिन केवल वादाम का पानी लिया और ११ दिन बीच बीच में खाली जल लियां। शेष दिनों में जल

भी नहीं लिया। अंतिम बार ४ सितम्बर को जल लिया था। इसके पश्चात् ४ दिन तो जल भी नहीं लिया।

कितने घोर तपस्वी थे आचार्य महाराज । कितनी घोर साधना थी आचार्य महाराज की।

साभार—आयार्च रत्न श्री देश भूषण जी महाराज का पावन चरित्र लेखक — वलभद्र जैन (संपादक दिव्यध्वनि मासिक) मगसिर शुक्ला २ वीर सं० २४६३ दिनांक १४ दिसम्बर १६६६

आचार्य शांति सागर जी के विचार

(चारित्र चकवर्ती)

१

शरीर की उष्णता से उसके जीवों का प्राण घात हो जायगा। अतः पुष्प चरणों पर नहीं चढाना चाहिए। — — — शीत ऋतु थी। एक दिगम्बर मुनिराज पूना जिले के एक नगर में में आए भक्तों ने उनका पंचामृत अभिषेक किया। जिससे उन को सन्निपात हो गया और वे मर गये। पृ० २७६

२

मुनिराज की मृत्यु होने पर उनकी देह को पद्मासन करो। पंचामृत से शरीर के पृष्ठ भाग का स्नान कराओ। कमण्डलु को आगे रखो। और गर्दन के पीछे पिच्छी को रख कर शरीर का दाह करो। दाह करने के बार शरीर की भस्म को आदर पूर्वक लगाओ। आगे से स्नान क्यों नहीं करना? कदाचित उस में प्राण आजावे और जलादि मुख के भीतर चला जावे तो दूषण आजायेगा। गृहस्थ की मृत्यु हाने के बाद शरीर के दाह हो जाने पर अवशेष हड्डी आदि को नदी में कभी न डालो। उस क्षार से बहुत जीव मर जाते हैं। जमीन में गड्ढा खोद कर गाढ देना चाहिए। अष्टान्हिका या दशलक्षण आदि व्रत में जिस वर्ष विघ्न आवे, उसकी पूर्ती आगामी वर्ष में कर लेवे। अधिक सुघडाई ठीक नहीं है। २७७

३

महाराज ने वारा मति में सं० १९९५ अर्थात् सन् १९३९ का चतुर्मास व्यतीत किया। २३७

४

सन् १९३० का पांचवां वर्षा योग व्यतीत करने की स्वीकृति जयपुर के लिए प्रदान कर दी। २३३

५

६ माघशुक्ला ७ के शुभदिन में विपुलाचल पर्वत के शिखर से सुधर्म केवलि ने मोक्ष प्राप्त किया थ। उस दिन भगवान जंबू स्वामी मुनिराज को,

जब दिन का आधा पहर बाकी था केवल ज्ञान प्राप्त हुआ था। २१५

६

७सन् १९४७ में महाराज ने वर्षायोग सोलापुर में व्यतीत किया था। १७७

७

जब आचार्य महाराज ने सन् १९५५ में सल्लेखना ली थी तब वे ॐ सिद्धाय नमः जप करते रहते थे। १५६

८

अब ॐ नमः सिद्धभ्यः कह सन् १९२७ की मार्गशीर्ष कृष्ण प्रतिपदा को प्रभु का स्मरण कर चतुर्विध संघ सम्मेदाचल पारसनाथ हिल की वंदनार्थ रवाना हो गया। मुनि त्रय, ऐलक पदाधिष्ठित तीन, क्षुल्लक तीन तीन क्षुल्लिकाएं थीं। १२३

९

कार्तिक कृष्णा प्रतिपदा की सं० २४५३ सन् १९२७ में संघ विहार शिखर जी की यात्रा संपूर्ण दि० जैन समाज को सुनाते हुए हर्ष होता है। ११८

१०

समडोली में शांतिसागर महाराज ने जो श्रमण संघ का निर्माण किया उसके कारण चतु: संघ समुदाय ने उन्हें आचार्य परमेष्ठी के रूप में पूजना प्रारंभ किया। ८८

११

कार्तिक सुदी १४ को मैंने तथा गोकाक के पायसागर जी ने उनसे ऐलक की दीक्षा ली थी। १० माह बाद आश्विनि सुदी ११ को मैंने समडोली में निर्ग्रंथ दीक्षा ली थी।। वीर सागर जी मुनि बने थे चंद्रसागरजी ने ऐलक दीक्षा ली थी। ८१

१२

उन्होंने अपना दूसरा चातुर्मास कुंभोज में सन् १९१६ शक् सं० १८३८

वि०सं० १९७३ में किया था। यहां आदि सागर मुनिकुंजर के सत्संग का लाभ रहा। ६१

१३

यरनाल में निर्ग्रंथ मुनि देवेंद्र कीर्ति महाराज से ऐलक जी मुनि शांति सागर जी बन गये। ७२

१४

उस समय वे शांति सागर महाराज रेल में बैठ कर गिरनार जी गये थे। ६६

१५

नेमिनाथ के निर्वाण स्थान की स्थाई स्मृति रूप ऐलक दीक्षा लेने का इन्होंने विचार किया था। इसलिए अब ये शांति सागर महाराज ऐलक बन गये। ६८

१६

देवेंद्र कीर्ति स्वामी जिन्हें देवप्पास्वामी कहते थे, से हमने शांति सागर महाराज ने जेठ सुदी १३ शक् सं० १८३७ में क्षुल्लक दीक्षा ली तथा फागुन सुदी ११ शक सं० १८४१ में दीक्षा ली थी। ४१

१७

पाय सागर के पास हमने शांतिसागर महाराज ने क्षुल्लक दीक्षा ली। दीक्षा लेने के बाद १८ नवम्बर सन १९४६ को हमने शिरगुप्पी में ऐलक दीक्षा ली थी। ६४

१८

आचार्य देशभूषण ने बताया था — प्रति वर्ष आयार्थ महाराज को पत्र भेज कर उनसे प्रायश्चित ज्ञात कर हम प्रायश्चित ग्रहण करते रहे हैं। मुनि जय कीर्ति महाराज उनके शांति सागर महाराज के दीक्षा गुरु थे। जय कीर्ति सागर महाराज के गुरु पायसागर महाराज थे। पाय सागर जी के गुरु आचार्य शांति सागर महाराज थे। इस दृष्टि से आचार्य महाराज देशभूषण महाराज़ के प्रपितामह हुए। देशभूषण महाराज से कहा—तब तो संयम की दृष्टि से आप

महाराज शांति सागर जी के प्रपौत्र ठहरे। देशभूषण महाराज ने कहा— बिल्कुल ठीक बात है। ४६३

१६

देवप्पा स्वामी दसगज लम्बा वस्त्र ओढते थे। उद्दिष्ट स्थान पर जाकर आहार लेते थे। आहार के समय वे दिगम्बर होते थे। भोजन के समय जोर से घंटा बजता था। आचार्य शांति सागर ने उनको यथायोग्य प्रायश्चित्त पूर्वक पुनः दीक्षा दी। उनके गुरू ने देवेंद्र कीर्ति महाराज ने भी गुरूत्व का पिरत्याग कर शिष्य पदवी स्वीकार की। ४५६

२०

विधवा का तांवुल भक्षण शील व्रत के विरूद्ध है।

२१

वहां के मठ के स्वामी भट्टारक जी के यहां आहार की विधि लगती थी किन्तु आचार्य महाराज वहां आहार नहीं लेते थे। महाराज कहते थे—मठ का अन्न ठीक नहीं है वहां का धन प्रायश्चित्त दण्ड आदि द्वारा प्राप्त होता है। निर्माल्य का धन नहीं लेना चाहिए। ४४६

२२

१०८ धर्मसागर मुनि महाराज ने कहा था—मैंने महाराज के यरनाल में दर्शन किये थे। वे शांतिसागर महाराज ऐलक थे। यरनाल में उन की मुनि दीक्षा हुई थी।

२३

देवेंद्र कीर्ति स्वामी एक बार पंच मुष्टि बनाकर कुछ केशों का लोंच करते थे। पश्चात् कैंची से शेष केशों को बनाते थे। आचार्य महाराज ने भोंसेकर आदिसागर मुनिराज से यरनाल ग्राम में मुनि दीक्षा ली थी। शांतिसागर महाराज के निर्ग्रंथ दीक्षादाता गुरू भोंसे ग्रामवासी आदिसागर जी की दीक्षा की अद्भुत कथा सुनने को मिली। मुनिपदवी का त्याग कर के कंबल ओढ लिया और स्त्री से कहा भाकरी आण खाने को रोटी दे। ४१०

२४

आचार्य महाराज देश काल आदि पर दृष्टि डालकर सर्व कार्य करते थे।

२५

वर्धमान सागर महाराज क्षुल्लक से ऐलक बन गये। आचार्य महाराज ने इनको आदेश दिया — यहां से वापिस दक्षिण जाने के पश्चात् फिर कभी मोटर आदि में नहीं बैठना। ४०४

२६

महाराज शांति सागर को देने योग्य कमण्डलुं तक नहीं था। अतः पास के लोटा में सुतली बांध कर उससे कमण्डल का कार्य लिया था। देवय्या स्वामी ने अपनी पिच्छी में से कुछ पंख निकाल कर पिच्छी बनाई थी और शांति सागर महाराज को दी थी। ४०१

२७

हमारे शांति सागर महाराज के घर में मुनिराज आदिसागर अंकलीकर, देवेंद्र कीर्तिस्वामी, आदि साधु लोग प्रायः पधारा करते थें। उस समय आजी माता उनकी सेवा भक्ति तथा आहारदान बडी खुशी से करती थी।३२१

२८

आचार्य शांतिसागर महाराज ने आ० आदिसागर मुनिराज अंकलीकर के विषय में बतायाथा कि वे बडे तपस्वी थे, और सात दिन के बाद आहार लेते थे। शेषदिन उपवास में व्यतीत करते थे। यह कम उनका जीवन भर रहा। आहार में वे एक ही वस्तु ग्रहण करते थे। वे प्रायः जंगल में रहा करते थें। जब वे गन्ने का रस लेते थे, तब वे रस के सिवाय अन्य पदार्थ ग्रहण नहीं करते थे। उनमें बडी शक्ति थी। आम की ऋतु में यदि आम के रस का आहार मिला, तो वे उस पर ही निर्भर रहते थे दूसरी वस्तु नहीं लेते थे। उनकी आध्यात्मिक पदों को गाने की आदत थी। वे कन्न्डी में पदों क़ो गाया करते थे।

वे भोज में आते थे और जब हमारे शांतिसागर महाराज के घर में उनका आहार होता था तब वे उस दिन हमारी दुकान में रहते थे। वहां ही वे रात्रि को सोते थे। हम भी उनके पास में सो जाते थे। हम उनकी निंरतर

वैयावृत्ति तथा सेवा करते थे। दूसरे दिन हम उनको दूध गंगा, वेदगंगा नदी के संगम के पास तक पहुचाते थे। बाद में हम उन्हें अपने कंधे पर रखकर नदी के पार ले जाते थे।

मैंने पूछा "महाराज! एक उन्त काय वाले पुरूष को अपने कंधे पर रखकर लेजाने में आपके शरीर को बडा कष्ट होता होगा ?"

महाराज ने कहा,"हमें रंचमात्र भी पीडा नहीं होती थी।" उतना बडा भार उन्हें ऐसा मालूम होता था जैसे कोई गृहस्थएक बालक को अपने कंधे पर रख कर नदी के पार ले जाता हो। वास्तव में उनकी शरीर सम्पत्ति अपूर्व थी", हम आचार्य आदिसागर महाराज अंकलीकर की तपस्या से बहुत प्रभावित थे। उनको हम आहरादान देते थे। उनके कमण्डल में हम ही जल भरते थे। उनके पास रहा करते थे। वे कोनूर के पास की गुफा में रहते थे। वहां मुनियों के निवास योग्य सैकडों गुफाएं हैं। एक बार मुनि कुरंजर आ० आदिसागर स्वामी ध्यान करते थे, तब शेर आया था "।

मैंने पूछा "महाराज शेर के आने पर भय का संचार हुआ होगा" ? महाराज ने कहा, "नहीं, कुछ देर बाद शेर नमस्कार करके वहां से चला गया "।

२६

आजकल साधु के चरित्र पत्र पत्रों में चर्चा चला करती है।। उनके विद्यमान अथवा अविद्यमान दोषों का विवरण छपता है। इस विषय में उचित यह है कि अखबारों में यह चर्चा न चलें, ऐसा न करने से अन्य साधुओं का भी अहित हो जाता है। मार्गच्युत साधु के विषय में समाज में विचार चले किन्तु पत्रों में यह बात न छपे। इससे सन्मार्ग के द्वेषी लोग अपना स्वार्थ सिद्धकरते हैं। किसी भी साधु का आहार बंद नहीं करना चाहिए।

चारित्र चकवर्ती(द्वितीय संस्करण)

मुनि देवेंद्र कीर्ति जी से दिगम्बरी दीक्षा धारण करने की प्रार्थना की। ——— आप प्रथम क्षुल्लक व्रत पालन कीजिये। चरित्रनायक जी ने श्री गुरू के प्रसाद से सं० १८७० में क्षुल्लक पद ग्रहण किया।

चातुर्मास समाप्त होने पर आपका आगमनं कुंभोज में हुआ। यहां पूज्य श्री आदिसागर जी दिगम्बर मुनि का समागम हुआ। चरित्रनायक जी का दूजा चतुर्मास श्री आदिसागर जी के साथ कुंभोज में हुआ। वर्षा काल पूर्ण कर अन्य स्थानों में विहार कर धर्म लाभ कराते हुऐ कुंभोज के पास बाहुवलि डूगरी (पहाडी) पर आए। बाहुवलि पहाड पर परम पूज्य मुनिकुंजर श्री आदि सागर जी विराजमान थें, आपने सहर्ष श्री गुरू को नमनकर ऐलक के व्रत ग्रहण किय अर्थात् सं० १९७४ को आपने चादर का परित्याग कर दिया। इसी अवसर पर समडोली के श्रावक गण श्री सिद्ध क्षेत्र गिरनार जी की यात्रा को जाते थे सो श्री शांतिसागर जी ऐलक को भी साथ ले गये। गिरनार जी की यात्रा कर जब वापिस लौटे तो सांगली के पास कुण्डलरोड स्टेशन पर श्री चरित्रनायक जी उतर गये।

अतः पूज्य श्रमणोत्तम श्रीपायसागर जी महाराज ने वि० सं० १९७६ ज्येष्ठ शुक्ला १३ को जिन दीक्षा का आभूषण पहना कर शांत सागर नाम से भूषित किया। (जीवन चरित्र—श्री आचार्य शांतिसागर जी महाराज लेखक —पं० मिट्ठनलाल जी जैन (दाहा) प्रकाशक — वर्धमान जैन पुस्कालय नई सडक —देहली अप्रैल १९३१)

आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी परिचय

आचार्य श्री का जन्म वैसाख वदी ६सं० १९६७ में फीरोजाबाद नगर के कटरा पठानन मुहल्ले में हुआ था। आपका बचपन का नाम महेंद्र कुमार था आप की माता श्रीमती बूंदा देवी अपने पति की भांति ही धर्मात्मा थी। उन्हें कभी भी उदास नहीं देखा गया उनके स्वभाव में हास्य, सुशीलता और मिलन सारिता का मिश्रण था। नियम पालन तथा व्रत–उपवास में उनकी बडी श्रद्धा थी। जब आप गर्भ में थे तभी उन्हें श्री सम्मेद शिखर की यात्रा करने की इच्छा हुई थी और वे शिखर जी गई भी थी। वहां भजन पूजन में उनके बडे भाव लगे थे। वे प्रतिक्षण भगवान की वीतराग मुद्रा का ही चिंतवन करती रहती थी।। यात्रा से लौटते समय मार्ग मे उन्होनें एक मुर्दे को देखकर संसार की नश्वरता पर विचार किया था। गर्भावस्था के उन्हीं विचारों ओर संस्कारों का प्रभाव बालक महेंद्र पर भी पडा। बचपन से ही उनकी प्रवृत्ति वैराग्य की ओर थी। वे भी अपनी माता के समान हंस मुख थे। खेलों में उनका मन नहीं लगता था। वे अवकाश के समय बालवोध बढते रहते थे। वे बडे स्वाभिमानी थे। आपके शिर पर गए लम्बी चोटी थी जब आपके समवयस्क आपकी हंसी उडाते तो आप घन्टों घर से बाहर नहीं निकलते थे और घर पर ही तत्व चिंतन किया करते थे।। आपक पिता जी एक शिक्षित पुरूष थे उन्हें अनेक संस्कृत के श्लोक कंठस्थ थे। आप उनसे उन्हें सीखते रहते थे।

आपकी प्रारंभिक शिक्षा फिरोजाबाद में ही हुई। जब आप नौ वर्ष के हुए, आपकी मातु श्री का देहावसान हो गया। उसके एक वर्ष बाद ही आपको मुरैना भेज दिया गयां। वहां से आपने नियमानुसार धार्मिक परीक्षाओं में उत्तीर्णता के साथ मैट्रिक की परीक्ष उत्तीर्ण करने के बाद आपने आपनी शेष शिक्षा इन्दौर में पूर्ण करने का निश्चय किया। वहां से आपने न्याय तीर्थ व शास्त्रयी चतुर्थखंड की परीक्षा उत्तीर्ण की छन्द, व्याकरण,न्याय, ज्योतिष, तर्क, आयुर्वेद, आदि शास्त्रों का गहन दअध्ययन किया। अब आप हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश तथा अग्रेंजी, भाषा में अच्छा ज्ञान प्राप्त कर चुके थे। सच्चे आत्म शोधक एवं अध्ययनार्थी के रूप में आपने अनेक स्थानों का परिभ्रमण किया।

आपके पास जब आपके विवाह का प्रस्ताव आया तो आपने स्पष्ट रूप से विवशता प्रगट कर दी आप विवाह करके पुनः संसार भ्रमण नहीं करना चाहते थे। आपने तो मुक्ति रमणी को वरण करने का ही निश्चय कर लिया

था। आप आसन आहार और मुद्रा पर विशेष ध्यान देते थे। एक ही आसनसे आप घंटों बैठ सकते थे तथा चार–चार दिन तक उपवास रखने का अभ्यास आपने कर लिया था।

आचार्य श्री ने लगभग बीस वर्ष की अवस्था में परमपूज्य मुनिराज चंद्रसागर जी से सप्त प्रतिमा (ब्रह्मचर्य व्रत) ग्रहण की। संवत १९६५ में मेवाड़ के टांकाटूका नामक स्थान पर पूज्य आचार्य वीरसागर जी से क्षुल्लक दीक्षा ली, पश्चात् ऊदगाँव (दक्षिण भारत) में लगभग ३२ वर्ष की अवस्था में श्री १०८ आचार्य आदिसागर जी के चरणों में आपने २४ प्रकार के अंतरंग और वहिरंग परिग्रहों का परित्याग कर नग्न दिगम्बर दीक्षा धारण की।

पूज्य गुरु महाराज के स्वर्गारोहण के उपरांत शेडवाल(वेलगाँव) में लगभग एक लाख जन समुदाय जिसमें दक्षिण भारत के तत्कालीन ब्रिटिश गवर्नमेंट द्वारा मान्य अनेक राजा महाराजा, जागीरदार आदि भी थे। अनेकानेक दिगम्बर वीतराग मुनिराज, ऐल्लक, क्षुल्लक आदि के समक्ष गुरूभक्ति पुरस्सर आचार्य पर पर आपको प्रतिष्ठित किया।

विहार और उपसर्ग

आचार्य श्री ने संपूर्ण दक्षिण भारत में विहार किया है। दस वर्षों तक दक्षिण भारत की भूमि आपके चरणांवुज के स्पर्श से पवित्र होती रही है। उत्तर भारत में भी बडवानी, इंदौर, भोपाल, कटनी, मधुवन, ईसरी, फिरोजाबाद, जयपुर(खानियां), नागौर, उदयपुर, गिरनार, पावागढ, पावागिरि(ऊन), धरियावाद आदि आदि स्थानों पर आपके चातुर्मास हो चुके हैं। सैकडों जहां आपके पवित्र चरण पहुचें हैं वहां वहां धर्म प्रभावना हुई हैं स्थान स्थान पर श्रद्धालु भक्तों द्वारा आपका स्वागत हुआ है। किन्तु संसार में सत्पुरुषों के साथ ही दुर्जनों का भी अभाव नहीं है। फूल के साथ कांटे होते ही हैं। जैसा कि दुर्जनों का स्वभाव है कि वे अकारण ही साधु पुरूषों पर अपनी दुर्जनता का प्रयोग करते हैं, पूज्य आचार्य श्री भी इसके अपवाद नहीं हैं। अनेक स्थानों पर आप पर अनेक उपसर्ग हुए हैं किन्तु शांति और समता के इस देवता ने उन्हें हमेशा क्षमा की ढाल पर ही सहन किया है।

शास्त्रीय कक्षा तक नियमानुसार अध्ययन करने वाले पूल्य आचार्य श्री ने अपनी विद्वत्ता को निष्क्रियता की जंग नहीं लगने दी, निरंतर चतुरनुयोग

के तलस्पर्शी अध्ययन के साथ साथ मराठी, गुजराती, कन्न्ड, तामिल आदि भाषायें सलिपि सीखकर उनमें समाविष्ट गहन आर्स का सूक्ष्म रीत्या अध्ययन किया है, आज आचार्य श्री अठारह १८ भाषाओं के बहुश्रुत प्रभावक विद्वान हैं। आपके मुखारविंद से जिस समय धारा प्रवाह वीरवाणी का मर्म स्पर्शी प्रवाह सन्चारित होता है उसे सुनकर धुरंधर शास्त्री विद्वान तक आश्चर्य चकित हो जाते हैं। आपके सुविशाल स्वच्छ सम्यग्ज्ञान की मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हैं, कठिन से कठिन शंकाओं का संतोषप्रद समाधान आप सदैव आर्षग्रंथों का तुरंत उद्धरण देकर ही करते हैं।यदा कदा आयुर्वेद औ ज्योतिष शास्त्र के पुट से आपके भाषण और उपदेश की गरिमा अत्यधिक समुन्नत हो जाती है।

इस प्रकार अट्ठाईस मूलगुण एंव आचार्य पदोचित छत्तीस गुणों का निरंतर निरतिचार पालन करने वाले,वीतराग देव और उनकी वाणी में लोकात्तर भक्ति करने वाले त्रिकाल वंदनीय पूर्वाचार्योंण्चं तत् प्रणीत आर्षमार्ग में अकंप आस्था रखने वाले परम पूज्य आचार्य महावीर कीर्ति जी महाराज आज विश्व की सर्वोत्कृष्ट आध्यात्मिक निधि हैं, धीरवीर महान निष्काम योगी संत हैं, शत्रु मित्र सभी में साम्य बरतने वाले परमवीतणा गुरू हैं, आज का आकुलित विश्व उनके ही मार्ग से सुख शंति लाभ कर सकता है।

साभार — "श्रीयोमार्ग "

संपादक— ब्रह्मचरी श्रीलाल काव्यतीर्थ

ब्रह्मचारी सूरज मल शास्त्री

सिद्धांत भूषण पं० रतन चंद जैन

अक्टूबर वन १९६४

ओंकार बिन्दु संयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः

कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमोनमः

अविरल शब्द घनौघ–प्रक्षालित सकल भूतलकङ्का

मुनिभिरूपासित तीर्था, सरस्वती हरतु नो दुरितम्

अज्ञान तिमिरान्धानां ज्ञानान्जन शलाकया

चक्षुरून्मीलितं येन, तस्मै श्री गुरूवे नमः

श्री परम गुरूवे नमः परम्पराचाय गुरूभ्यो नमः सकल

कलुष विध्वंसकं, श्रेयसां परिवर्धकं, धर्मसम्बन्धकं, भव्य

जीवमनः प्रतिबोधकारकं, पुण्यप्रकाशकं, पाप प्रणाशक

मिदं शास्त्रं श्री भगवती आराधना नामधेयं

मसाद्य। श्री गोम्मटसार जीवकाण्ड़, कर्मकाण्ड

नामधेयं श्री तत्वार्थ राजवार्तिक नामधेयं श्री सर्वज्ञ

देवास्तुदुत्तर ग्रन्थ कर्तारः श्री गणधर देवाः प्रति

गणधर देवास्तेषां क्चोऽनुसारताभासाद्य पूज्य

श्री नेमिचन्द्राचार्य, अकंलक देव, विरचितं इदं शास्त्रं

श्रोतारः साधानतया श्रृण्वन्तु

मंगल भगवान वीरो मंगल गोतमोगणी

मंगलं कुन्द कुन्दाद्यो जैन धर्मोऽस्तुंमंगलम्

सर्व मंगल मांगल्यं सर्व कल्याण कारकम्

प्रधानं सर्व धर्माणां जैनं जयतु शासनम्

श्री १००८ चौबीस तीर्थंकर महाराज की जय। श्री अनंतानंत परम सिद्ध भगवान की जय। श्री १००८ महावीर स्वामी भगवान की जय। श्री १००८ पावापुर महाराज की जय। श्री १००८ मांगीतुंगी क्षेत्र की जय। श्री ६६ करोड़ मुनि महाराज की जय। श्री १०८ मुनि कुंजर समाधि सम्राट आचार्य आदि सागर महाराज की जय।

सब मिल जय बोलो आचार्य महावीर कीर्ति महाराज की जय।

ये जितने भी शासन देवी देवता हैं ये सब सम्यंकहष्टी हैं, और सम्यक दर्शन के पालन करने वालों की रक्षा करते हैं। मिथ्याहष्टियों को भी सम्यकहष्टी बनाते हैं। जैन धर्म की महान प्रभावना करते हैं। उसमें भी शासन देवी पदमावती, इनका नागौर के शास्त्र भंण्डार में एक विशेष चीज निकली, कि पदमावती देवी एक भव मनुष्य का लेकर नियम से मोक्ष में जाने वाली है। यहां सम्यग्दर्शन सम्पन्ना सम्यग्ज्ञानउपरायणा, सम्यक् चारित्र सम्पन्ना रत्नत्रय महानिधिः।

वैष्णव पुराण में आया हुआ है कि पत्तों के बीज को स्पर्श करके और रविव्रत को नमस्कार करके गजपंथ कुंड में स्नान करने से फिर पुनः जन्म नहीं होता है। "स्पृष्टा शत्रुंजयं तीर्थं, नत्वा रैवत काचलं। गजपथः कुंडे स्नात्वा, पुनर्जननं न विद्यते।।" अर्थात शत्रुंजय तीर्थ का स्पर्शन करने से, रैवतक पर्वत को नमस्कार करने से तथा गजपन्था क्षेत्र के कुण्ड में स्नान करने से पुनः जन्म नहीं होता। यहां सबसे पहिले सजातीय आया है। सजातीय किसे कहते हैं। माता की वंश परम्परा की जो शुद्धि है अर्थात जिसमें कभी किसी ने विधवा विवाह नहीं किया है। जिसमें विजातीय तथा अन्तरजातीय विवाह नहीं हुआ है। अनाचार अत्याचार नहीं हुआ है ऐसे माता और पिता की जो वंश परम्परा है, इन दोनों की जो शुद्ध है उसका नाम सजातीय है। यदि मनुष्य कुछ भी नहीं करे ओर अपनी वंश परम्परा जाति तथा कुल (वंश) की रक्षा कर होता है तो उस शुद्ध वंश में ही तीर्थंकर, महापुरूष मोक्ष में जाने वाले लोग ओर धर्म की, चयारित्र की देश की तथा जाती का उद्वार करने वाले लोग ही पैदा होते है। इसलिए यहां सबसे पहले सजातीय लिया है।

सज्जातित्वं सद्‌ग्रहस्थत्वं पारिव्राज्यं सुरेन्द्रता

साम्राज्यं परमर्हन्त्यं पर निर्वाणमित्यापि।। श्री आदिपु॰ पर्व ३८ श्लोक–८४

सजातीय कैसे प्राप्त हो सकती है? भद्रबाहु आचार्य लिखते हैं कि इसमें नुकसान क्या है ? लोग यह समझते हैं कि हम चाहे जिस जाति में विवाह करें, हमारी उन्नति होगी। पर इससे उल्टा है। सज्जाति पितुरन्वय अद्धिर्या तत्कुलं परिभाष्यते, मातुरन्वय शुद्धिस्तु जातिरित्यमि धीयते।।

विजातीय माने जो खण्ड़ेलवाल परवान आदि जाति। अगर खण्ड़ेलवाल ने परवाल की बेटी ले ली, और परवाल ने खण्डेलवाल की बेटी ले ली तो उसमें शुद्ध सन्तान पैदा नहीं होगी। इससे न वह परिवार खण्डेलवाल रहेगा और ना ही परवाल। विजातीय ओर अन्तरजातीय विवाह करने से देश का सत्यानाश हो जावेगा। दूसरी वजह क्या है, जैसे खच्चर की उत्पत्ति, जैसे गधा ओर घोड़ा घोड़ी ओर गधा यदि दोनों का संयोग होता है तो उसमें शुद्ध संतान पैदा नहीं होती। इससे खच्चर सन्तान पैदा होती है। ओर इस सन्तान का क्या नियम है कि आगे उसकी वंश परम्परा नहीं चलती इसलिए हमारे आचार्य कहते हैं कि :–

देश जाति ओर कुल जिनके वंश परम्परा शुद्ध रहती है उससे बडी सिद्धि होती है। ओर यह भी आचार्यों ने बताया कि अन्य लोगों ने यदि किसी को रख लिया जिनके विधवा विवाह विजातीय विवाह अन्तरजातीय विवाह होते हैं। उनकी सन्तान परम्परा से कमजोर होती है वह। क्योंकि वक्त पड़ने पर इनके खून में वह ताकत नहीं हो सकती कि वह तुम्हारी रक्षा कर सकेंगे। इसलिए आचार्य यहां बतलाते है कि अपने पास में ऐसे आदमी रखने चाहिए जिनकी वंश परम्परा शुद्ध हो। देखिये जैसे घोड़ो में भी महाराणा प्रताप सिंह का चेतक घोड़ा, जिसकी परम्परा शुद्ध थी। उसने मरते मरते भी महाराणा प्रताप की रक्षा की। वस्तुस्थिति ऐसी है कि जो भारत वर्ष में महाराणा प्रातप सिंह का नाम विशेष लोग लेते हैं। इंगलैड़, जर्मन, जापान आदि जो विदेशी देश हैं उनमें भी यह प्रसिद्ध है कि मेवाड़ सरताज है। इसका कारण क्या है कि महाराणा प्रताप सिंह ने यहां पर यह विचार मंजूर किया कि चाहे प्राण जावो तो जावें, पर मैं हरगिज भी अपने देश की लड़की इन मुसलमानों को नहीं दूंगा। इसके लिए ओर कोई झगड़ा नहीं था। उसका चचेरा भाई शक्तिसिंह से भी बड़ा झगड़ा हुआ। उसका यह कहना था कि चाहे, भंगी,

चमार, तेली, तमोली, कसाई, खटीक किसी की भी बेटी हो तुम दे दो और झगड़ा समाप्त करो काहे के लिए लड़ते हो। दूसरे क्षत्रीय लोगों ने दे दिया। उसका यह कहना था कि में दे दू किसी दे दूं ? जो यदि भंगी, चमार, तेली, तमोली, कसाई, खटीक की भी लड़की है। ओर में राजात कहलाता हूं। राजा प्रजा का बाप कहलाता है। इसलिए सबके सब मेरे पुत्र पुत्री के समान हैं। इसलिए हरगिज भी नहीं दूंगा। इसी बात से नाराज होकर शक्तिसिंह अकबर बादशाह से मिल गया ओर फौज लेकर आया और अनेक प्रकार से अनर्थ करना चाहा। जिस समय पहिला पहिला युद्व होता है तो उस समय महाराणा प्रताप सिंह शक्तिसिंह को कहते है कि में तेरे ऊपर पहिले वार नहीं करूंगा, क्योंकि अपने वंश में जो पैदा हुआ है उसको मेरे हाथ से नष्ट नहीं करूंगा। लेकिन शक्तिसिंह तो लड़ने के लिए आया था। उसको घमण्ड छाया हुआ था। धर्म कर्म को नहीं समझता था। इसलिए कहने लगा मेरी बात नहीं मानी ओर लड़ा। किन्तु महाराणा प्रताप सिंह का पूण्य ओर भक्ति आदिनाथ केशरियानाथ पर इतनी थी कि वहां जाकर के अपना भाला तलवार, ओर ढ़ाल रख देता है ओर भगवान से कहता था प्रार्थना करता था कि हे भगवान ये सब यदि उठकर के मेरे हाथ में आवेंगे तो में लड़ने के लिए जाऊंगा, नहीं तो मुसलमानों के हाथों मरने की अपेक्षा आपके चरणों में मरना अच्छा है। तब शासन देवी देवताओं का ऐसा प्रभाव होता था कि उसकी ढ़ाल भाला तलवार सब उठकर के उसके हाथों में आ जाते थे ओर वह समझ जाता था कि मेरी विजय होगी।

यद्यपि देखा जाये तो गढ़ गिरनार से ७२ करोड़ मुनि महाराज मोक्ष गये है। मांगीतुगी जी से ६६ करोड़ मोक्ष में गये है, और सम्मेद शिखर से असंख्यान मुनि मोक्ष में गये हैं तो सम्मेद शिखर की वन्दना करने से १ अरब ६८ करोड़ ७१ लाख उपवास का फल मिलता है तो यहां भी कोई कमी नहीं है। यहां ६६ करोड़ मुनि महाराज मोक्ष में गये हैं। एक–एक मुनि की वन्दना का अगर एक–एक करोड़ भी लिया जावें तो ६६ करोड़ से कम तो है नहीं। किन्तु बस्तुस्थिति ऐसी है किजो जीव कुछ बात को धर्म को नहीं समझते है, वहां अपनी सिद्धी नहीं कर सकते हैं। अंतिम में तुमको क्या छोटी सी बात कहना है हमको तो कि धर्म की सिद्धी अपने अंतरंग, परिणामों को जो शुद्ध रखता है, वहीं लोग आप कहते है बड़े लोग, बड़े लोग, छोटे लोग को ओछापन करके बड़े लोगों को मारना चाहते है किन्तु ये मारवाड़ी आ गये, ये मेवाड़ी आ गये, ये लीखपति हो गये, इत्यादि इनके पास तो कुछ भी नहीं था, अरे भई जो भेग भूमि है, जिसका जहां पर जिसका भाग्य जमा हुआ है उसको वह

चीज वहां मिलती है और वह कहे कि मैं कोई भेग भूमि में पैदा हुआ हूं तो ये सबकी सब मेरी चीज है ऐसा नहीं है,लेकिन यह आहार क्षेत्र से आये हुए प्रचारक बैठे हुए है उसी आहार क्षेत्र में क्या हुआ कि एक सेठ सेठानी थे उनकी संतान पैदा होती और मर जाती तो वे ज्योतिषियों पर नाराज हुए कि तुम अच्छी कुंड़ली योग नहीं देते, अच्छा मुर्हुत नहीं देते अच्छे संस्कार नहीं कराते इसलिए मेरी संतान मर जाती है तो उन ज्योतिषियों ने हाथ जोड़कर कहा कि सेठ–सेठानीजी देखों यह दोष तुम्हारा है और नाम लगाते हो हमारा। तुम तुम्हारे बेटाओं का नाम अच्छा रखते हो और सुन्दर बेटा होते हैं और गाल के ऊपर काली टिकी लगाते नहीं हो उनको नजर लगती है और उनके नाम पर भी टोक लगती है, इसलिए वे मर जाते हैं। फिर क्या नाम रखना है ? तो ज्योतिषियों ने कहा कि तुम कहो सो नाम रखेंगे। तो अच्छी बात है तो जब दूसरा लड़का पैदा हुआ तो क्या नाम रखना गधा भैंसा सा फिर दूसरा पैदा हुआ तो उसका नाम क्या गधा सा भैसा सा, गद्यासा। फिर गधा सा जो है उनकी की हुई रचना साहित्य की है, छपी हुई है, हमारे पास साहित्य मौजूद है, उसमें क्या है कि भैसांसा झांसी से जस्ता लेकर के जाता है तो आहार क्षेत्र में आता है गाड़ी भरके तो उसके यहां पर चलते समय देखते हैं कि क्या है वह जस्ता सबका सब चांदी हो गया तो भैंसासा कहते है कि यह गलती से आ गयी चांदी वापिस करों। वैसा कि या फिर भी जस्ता का चांदी हो गई। यह पुण्य है। खां गये, खां गये , अरे कौन खाने के लिए रहता है जो साधु संत,त्यागी व्रतियों का खायेगा निर्माण खा जायेगा तो क्या उसका वंश रहेगा क्या ? कोई प्रकिया रहेगी क्या? लोगों के पेट में पाप क्या है? धर्म नहीं करने देना सम्यक् दृष्टि को इसी कारण से लोग अनेक प्रकार के अनर्थ पैदा करते हैं। धन की रक्षा करने के लिए इसमें तुमको तत्व क्या समझाना है कि जब महाराणा प्रताप सिंह बहुत दुःखी हो गया उसकी सब सेना हजारों की सेना मर गयी तो उसने महाराणा प्रताप सिंह ने अकबर बादशाह को चिट्ठी लिख दी कि मैं तुम्हारे पास में आता हूं मेरे पास भामाशा दिगम्बर जैन उसको समझ में आयी महाराणा प्रताप सिंह ने अकबर बादशाह से उसके पास पैसा नहीं रहने से ओर सेना नहीं रहने से मरने के लिए तैयार हैं, धर्म को मरने के लिए तैयार है, उसको नींद नहीं आती थी वह रात भर करवटे बदलता था सुबह उसने घोड़े के ऊपर बैठकर के ओर महाराणा प्रताप से देहली जा रहे थे एक पैर उन्होंने उनके ऊपर रख दिया था हे महाराणा प्रताप सिंह अब यह दूसरा पैर ऊपर नहीं रखा जायेगा उनको कुछ करना पड़ेगा, क्या करूं, भामाशा रो करके गद्‌गद् हो करके छाती से छाती मिलाकर के कहते हैं कि सब खजाना

खत्म, मेरे शूरवीर सब खत्म, क्या करूं, कोई उपाय नहीं है। उस समय भामाशा जैन कहता है आप चिन्ता मत कीजिए मेरे पास सात पीढ़ियों का न जाने कितनी ही पीढ़ियों का करोड़ों, अरबों धन है जो आपके चरणों में न्यौछावर करता हूं और अब धर्म की रक्षा की और बराबर उससे महाराणा प्रताप सिंह ने उसकी सम्पत्ति को लेकर के फौरन सेना बनाई ओर धर्म की रक्षा की। देखों हमको अच्छी तरह से मालुम है कि बंगाली बिहार प्रान्त में दुभिक्ष पड़ा हजारो लोग सड़क पर अन्न पानी के लिए मर रहे थे। उस समय पर क्या कहते थे। उनको पाप कर्म का उदय आया। क्या कहते थे कि ये मारवाड़ी लोग आ गये, ये मेवाड़ी लोग आ गये, ये गुजराती लोग आ गये। हमारे देश को सबको खा लिया, ये कर लिया, वो कर लिया तो बड़े बड़े लोग बंगाली और बिहारियों में से ही लोग जाकर उनसे मिले कि हम सब मर रहे है, हमारी रक्षा करो तो उन्होंने कहा कि देखों ये हम सबको गाली देते हैं तो क्या हम लोग पत्थर के हैं। अरे जब गाली देते हैं तो गाली खाओं तो गाली खाते हैं कि नहीं। हमको कोई भी चिन्ता नहीं, किन्तु आप यह देख लीजिये कि हमारा न्याय कि आप गाली नहीं देगें और हम सब लोगों को समझा देगें तो उन्होंने एक--डेढ़ दिन में तीन लाख रूपये का चिट्ठा करके दिया और मारवाड़ियों ने और गुजरातियों ने लोग मरते हुए लाखों बंगालियों, बिहारियों और देशवासियों को बचा लिया तो चीज क्या है। एक बहुत बड़ी भारी सभा हुई और सभा में यह बात हुई कि कहां कहां, क्या--क्या पैदा होता है। कोई कहने लगा हमारे यहां गेहूं अच्छा पैदा होता है, कोई कहता है मटर, कोई कुछ कहता है क्यों भई, हमने यह कहा कि देखों भाई तुम्हारे मारवाड़ में तो कुछ नहीं होता है मोठ, बाजरा पैदा होता है तुम सम झते नही हो। मारवाड़ देश का नाम है मानव देश। मानव देश। मानव देश आप उधर मारवाड़ देश मे। रहने वाले मूल वतन के हैं समझे, तो मारवाड़ में क्या होता है इसका नराम है मानव देश। मानव देश माने यहां पर पुण्यात्मा मनुष्य पैदा होते हैं समझे, तो पुण्यात्मा मनुष्य जहां जायें नर वहां छाये घर। उन्होंने कहा कि तुम स्कूल, कालेज में पढ़ने वाले जितने भी बैरिस्टर हो, मिनिस्टर हो, मास्टर हो तुम सबकी ईमानदारी से बताओ कि मारवाड़ियों का अन्न जिसने न खाया हो वो ऐसा तुम में से कोई भी मौजूद हैं क्या ?कोई भी है क्या ? तो उन्होंने कहा कि फलाना मारवाड़ी आया था उसने यह खिलाया था ,वो खिलाया था तो बात एक ऐसी है कि तुम धर्मात्माओं को खत्म करके तुम खत्म हो जावोगे, और मर जावोगे और जिन्दा नहीं रहोगे इसलिए तुम धर्म को समझो। मेरे कने का उद्देश्य क्या है ? यह तो भाई जिसका जहां पर भाग्य फलित होने वाला है ,

उस का भाग्य नहीं फलेगा अमेरिका में फलित होने वाला है , किसी का भाग्य मेवाड़ में फलित होने वाला है। किसी का नहीं –कहीं विश्व में पर यहां फलिताना शत्रुंजय पहुँचे उस समय पर श्वेताम्बर मारवाड़ी हमारे पीछे लगा और कहने लगा कि महाराज मैं तुम्हारी भक्ति करता हूँ , मैं श्वेताम्बर हूँ और दिगम्बर मैने मंदिरन बना रखा है। मूर्ति बना रखी है फिर मैं धर्म के लिए तो दिगम्बर मूर्ति की पूजा करता हूँ और धन के लिए शासन देवी देवता पदमावती ज्वालामातिनी इनकी मूर्ति रखता हूँ , उसके कारण से व्यापार में ऐसा कोई रिकार्ड नही कि इतनी जल्दी कोई कोटयाधीश हुआ हो। मैं वहां पर कोटयाधीश हुआ हूँ इसलिए यहां भगवान की तो वाणी कहती है भगवान आदीश्वर को कैलाश में जसका तसे मुक्ति व्रसवत्त हुई और जब पैदा हुए थे अयोध्या नगरी में, और जिसका जहां पर भाग्य होता है उसका वहा फलित होता है। इसलिए कहने का अभिप्राय यह है कि भामाशा ह जो था उसका कहना सही हुआ था। अग्रवाल का ,इससे और वहां जाकर के आहार क्षेत्र में जाकर के उसका जस्ता का चांदी हो गयी। ईमानदारी के द्वारा साहूकार होने से उसने कहा कि भैया आपने चांदी का दाम दिया नहीं है, जस्ते का भाव चुकाया है इसलिए ईमानदारी से चांदी देकर के आवो, और जस्ता अपना लेकर के आवो जब वे लौटते हैं। जब वे झांसी में पहुंचते हैं तो साहूकार कहता है कि क्या हमारे मुनिमों को क्या हुआ है,उनको रतौंधी आती है ,आंखें मिचती आती है, क्या ? क्या जिसके कारणउनको चांदी और जस्ता नहीं दिखता है उन्होंने जस्ते की जगह चांदी कैसे लाद दी समझे तो मुनिमों लोग आकर के हाथ जोड़कर कहे हैं कि सेठ साहब हमारी चांदी कोठियार ज्यों के त्यों मौजूद हैं और उनमें ताला व फलूप लगा हुआ है। हमने जस्ता ही दिया है। चांदी नहीं दी है। आप जाकर देखो हमने वो जाकर के देखाते हैं कि सबका सब जस्ता का जस्ता चांदी नहीं और फिर वो आहार क्षेत्र में आते हैं और देखते हैं कि जो बड़ी बड़ी गाड़ियां हैं वो सबकी सब चांदी है तो भई कहने का अभिप्राय यह है कि मारवाड़ देश का क्या और भारत देश का क्या ? पहले कोई इसी विश्वास इस प्रकार का था कि लोग, आदमी जो थे वो बारह–बारह वर्ष तक रत्नदीप में जाते थे और वहां रत्नों का रत्नों के जहाज लादकर के लाते हैं तो ऐसी चीज है। तुम यह कहोगे कि हम इनको भगा देवें तो ये भगेगें नहीं, तुम कहोगे कि इनको मार डालें तो ये मरेगें नहीं। तुम तम्हारे पाप रफप परिणामों में एक प्रसंग कल हमारे पास आया कि महाराज ऐसी ही एक बात है लाग हमको तंग करते हैं तो उनको तंग करने दो। पर अपने को उन्हें तंग नहीं करना। तो आज भी ये मारवाड़ी ,गुजराती ये देशवासी लोगों के लिये अच्छा भाव रखते

हैं कि यह ऐसा नियम सिद्धांत है जो अच्छा भाव रखता है ,समझे टिट फॉर टैट नहीं करना इज ए रैट ऑफदा किएशन गॉड इज ए नॉट दा किएशन नॉट ऑपफ इज दा ओल्ड किएशन। अपनी–अपनी सिद्धी का कर्ता आप ही आप है ईश्वर सिद्धी का कर्ता नहीं है तो इमको यह बात बतलाना है कि जो आपस में राग–द्वेश चलता है इसको तुम जब तक खत्म नहीं करोगे, जब तक तुम संख्यी नहीं रह सकते हो इसलिए आचार्य यहां पर यह बात बतलाते हैं कि महाराणा प्रताप सिंह ने जो चीज बतलाई धर्म के उफपर मर गया तो जब उसकी मौत से मर गया तो दुश्मन लोग और दुष्ट लोग जो थे उन्होंने जाकर के अकबर बादशाह के पास में इसलिए की हमको ईनाम मिलेगा। हीरा,मोती,सोना,माणक पन्ना मिलेगा तो दुश्मन मर गया है तो इसलिए वो वहां पर पहुँचे तो अगबर बादश।ाह क्या कहता है। अकबर शाहनामा में अकबर बादशाह ने फारसी भाषा में स्वयं लिखा—

अरे तुम क्या समझते हो क्या अकबर बादशाह कहता है कि महाराणा प्रताप मरा नहीं, अपनी इज्जत पर दाग नहीं लगाया और मूर्खो को भी अपनी पगड़ी से नमस्कार नहीं किया धर्म की धरा को जिसकी भुजा चारन करती थी लोगों ने बुलाया तो नहीं आया। थाली सुपारी में नहीं आया। महाराणा प्रताप जीत गयो। महाराणा प्रताप मरा नहीं है बल्कि वह जिन्दा है और वह जीवन्त है और उसका यहां घास के नीचे पूरी रात घास में बितायी समझे, उसने अपने यश में दाग नहीं लगाया , इसलिए वह जीवन्त है तो इसलिए यहां पर भारतव८ि के जितने भ्ी वेद,पुराण, जितने भी कुरान मुसलमानों में भी मुगल,पठान जो चार जातियां है वो भी दूसरी जाति में बेटी नहीं देते हैं। जो मुसलमान,हिन्दू से मुसलमान जाति से जो बिगड़े हुए हैं उनकी बेटियां इधर–उधर करके दे देते हैं और तुमको समझा देते हैं कि इमने तुमको बेटी दी तो भाई यहां यह कहना है कि जो वंश परम्परा,जाति कुल गोत्र को शुद्ध रखेगें उनके आगे महापुरष ,तीर्थंकर आदि पैदा होगें इसलिये अब शे८। मूलतत्व तो क्या है कि इन परम स्थान को जो बड़े–बड़े स्थान हैं। इनसे बड़े कोई स्थान नहीं है। इनका रक्षण करना चाहिए। दूसरी बात तो आज यह चलने लगा है कि लड़की वाले से रुपया लेना, तब लड़का विवाह करना तो यह तो बड़ी भारी अनर्थ की बात है ना कि इसका तत्व तो यह समझ में आया है कि पहले ऐसा था कि जो लड़का अभी भी गुजरात में और दूसरी भी मेवाड़ में इतने तो सतरह तोले सोना,पांच सौ तोले चांदी, ये लड़के वाला देवे तो लड़की देवे। लेकिन ठीक अब क्या हो रही है इसका मतलब यह है कि पहले

यहां पर ऐसा था कि लड़की लड़की के लिए लड़का यहां तक कि एवज हलचल मच गई कि लड़का हराज के,दो हजार के,तीन हजार के,पांच हजार के,दस हजार के, पच्चीस हजार के तो उन्हांने ऐसा करो कि एक तराजू के पलड़े में लड़ऋकी को बैठा लो,एक तराजू के पलड़े में मैं रुपया भर देता हूँ उतने तुम रुपया लेलो तो ऐसा भी हुआ कि बड़े–बड़े घरानों के लड़के कुआंरे रह गये तो सृष्टि का नियम है कि ज्यादा लड़कियां पैदा होना ये पाप कर्म का उदय है नीच कर्म का उदय है। लड़का ज्यादा पैदा होना ये पुण्य कर्म का उदय है। तुम अब सुनो ऊँचे लोग

एक जगह बड़े–बडे सेठ साहुकार और बड़े–बड़े बैरिस्टर वकील मुझसे पूछने लगे कि महाराज हम तुम्हारा तत्व उपदेश नहीं सुनते हैं। सबसे पहले तो हमको यह बताओ कि लड़कियां ज्यादा पैदा होनी चाहिये और उनके लिये बड़ा अनर्थ होने लगा है तो ये क्यों ? इसका कारण क्या है ? इसका मूल कारण। यह है कि अगलंक देवाचार्य तत्वार्थ राजावार्दिक में इस बात को बताते हैं कि मसर्टी ब्युटीफूल माई फेज इट इज दो वर्क ऑफ दी **वुमैन नॉट** ऑफ दा मैन। श्रंगार करना स्त्रियों का काम है और अपनी शूरवीर अपनी छाती पर लेना और मस्तिष्क पर लेना यह शूर पुरुषों का काम है तो इस प्रकार से आज क्या हुआ है। बड़े–बड़े घराने के लड़के भी क्या करते हं। बाल रखते हैं। मांग बनाते हैं। श्रंगार करते हैं। मसरी इज माई ब्युटीफुल माई फेस। ये सब किसके लिये दर्पण देखते है, कोई–कोई अनेक प्रकार की साइकिल में दर्पण लगाकर के चलते हैं और उसमें अनेक एक्सिडेंट भी हो जाते हैं तो बात एक ऐसी है कि कर्म बंद जो है वह किसी को भी नहीं छोड़ता है। श्रीपाल कोटि भट्ट नि हंसी मजाक में मुनि महाराज को कोढ़ि कहा था, सात सौ मित्रों ने भी उसकी अनुमोदना की थी इसलिए श्रीपाल कोटि भट्ट को कोढी होना पड़ा था और उसके सात सौ मित्रों को भी कोढी होना पड़ा था। अंजना सुन्दरी ने बाईस वर्ष तक पति का वियोग सहन करना पड़ा था। कर्म सिद्धांत किसी को छोड़ता नहीं। यहां भारतवर्ष में इस बात को सब ही लोग समझते हैं कि विधाता का विधि विधान किसी से टल नहीं सकता और उसमें सत्य भी यह है कि जो हंसते–हंसते कर्मो का बंध करते हैं फिर रोते–रोते उसको भोगना पड़ता है। यहां तथ्य यह है कि बड़े–बड़े बैरिस्टर, मिनिस्टर अनेक प्रकार के बड़े–बड़े एज्यूकेटेड इस राग से रोगी है अर्थात अपने बालों का श्रंगार करते हैं। श्रंगार प्रियता ज्यादा बढ़ने से ये बड़े–बड़े बैरिस्टर, मिनिस्टर, वकील इत्यादि सबके सब मर–मर के लड़कियां पैदा होती है है।

आपको इस रोग बही खाता को सम्भालना होतो आप ठीक तरह से यह समझ लीजिये कि जो लड़कियां है वह जल्दी ही बी०ए०, एम०ए०, एल०एल०बी० पास हो जाती है लीडर और मिनिस्टर हो जाती है और लड़कों को देरी लगती है तो इसका कारण क्या है ? इसका कारण। यह है कि पहले तो पढ़ी लिखी थी और संस्कार में ही इतना फर्क पड़ा कि उन्होंने जो पढ़ाई की थी वो ज्यों की त्यों रही पर जो वह श्रंगार किया थ। उससे बदलकर के वो बड़े-बड़े लोग बैरिस्टर, मिनिस्टर इत्यादिक जो हैं वो लड़की हो गये हं और अब फिर लड़कों की कमी हो गई है। इसमें हमको यह बात समझने की है कि संस्कार में एक जगह क्या हुआ कि एक लड़की की बात को समझने लड़की आती थी और वह कहता था कि तेरा विवाह करलो तो लड़की हमेशा यह कहा करती थी कि तुम मेरा विवाह किससे करोगे ? तो कहने लगे कि तू लड़की है इसलिये तेरा लड़के से विवाह करुंगा तो वह कहती थी कि मैं लड़के से विवाह नहीं करूँगी , तो बात क्या है, तो मेरे भाव नहीं होते तो जिसके निश्चित भाव रह गये हैं तो सोलह वर्ष की अवस्था के बारे में जो डाक्टर सर्जन जो हैं कि गोंग अंक में दर्द हुआ तो डाक्टर सर्जन को दिखाया और ऑपरेशन करते हैं तो लड़की का चिन्ह मिटकर के उसको लड़के का चिन्ह हो गया और उसका लड़की से विवाह हुआ तो कहने का मतलब यह है कि यह चीज ठीक समझ में आती है कि जिन जीवों का परिणामों में जिस प्रकार की शुद्धता और अशुद्धता होती है वैसी ही चीज होती है। जो ताको कांटा बोये, ताहे बोअे तो फूल, तो को फूल के फूल है वहां का है त्रिशूल। मुझे तुमको यह कहना है कि अब कुड उदय यह मारवाड़ी, मेवाड़ी,गुजराती इन लोगों ने भारतवर्ष के गांधी वगरह को, तिलक, महात्मा वगरह को करोड़ों, अरबों, खरबों, रूपया देकर के ओर अंग्रेजों से राज्य छुड़ाकर के तुमको दे दिया और राजा-महाराजाओं ने भी दे दिया कि तुम देश का उद्धार करोगे और इनके लिए भी कुछ करोगे। अब तुम्हारे पेट में बेईमानी आयी है कि इन मारवाड़ियों को खत्म कर देना, गुजरातियों को खत्म कर देना, राजा महाराजाओं को खत्म कर देना तो इसका भविष्य शासन देवी देवताओं ने ये निश्चित कर दिया है कि थोड़े समय ये दृश्य होने वाला है, जो टल नहीं सकता है। पृथ्वीराज चौहान, इब्राहिम मोहम्मद गौरी में अनेक हप्रकार के युद्ध हुए और युद्ध होने थे और यहां पर पृथ्वीराज चौहान कोन है ? मौहम्मद गोरी को मुसलमानों की फौज बनाया। किन्तु अंतिम समय पर ज्योतिषि, मंत्रवादी, तंत्रवादी, पंड़ित लोग सब लोगों ने मिलकर के ओर भारतवर्ष के जोशासन देवी देवता थे उनमें से बीरभद्र जैसे मणिभद्र है उसी प्रकार का शासन देवी देवता में वीरभद्र महाराज है उनको बुलाया और कहा

कि भारतवर्ष का क्या होगा ? उन्होंने कहा भारतवर्ष का क्या होगा, मुझको क्या सुनना है, परन्तु मुझको यहां मूल मुद्दे की बात तो हमको यहां यह बतलाना है कि धर्मो रक्षकः एंव धर्मेण रक्षितः भवति। जो धर्म की रक्षा करता है तो धर्म की उसकी रक्षा करता है। मेरा उपदेश यहां कहना है कि :—

जो मूर्ख लोग यह समझते है कि हम लड़की के रूपयों से धनाढ्य बनेगे तो उन्हें समझ लेना चाहिए कि लुगाई के धन से जो धनाढ्य बनना चाहता है अर्थात वहां उसके पुरूषत्व के भाव नहीं है, उसमें वीरत्व के भाव नहीं है तो जहां मनुष्य जायेंगे वहां पैर मारेगें, वहां का पानी पैदा करेंगे। यह शूरता का काम है तो यहां क्या कहना है। नीतिशास्त्र में एक लाख रूपये का महाराज भोज ने जो यह श्लोक दिया था वह यह है कि रसोई तैंयार हो गई। फल पका हुआ है। नारी व स्त्री का पहला यौवन है उसी का बड़ा महत्व है। पाप से नहीं ढ़रते है। वह जल्दी से जल्दी विवाह करते है। इससे क्या होता है। इससे हपूर्व भक्ति होता है। इसके लिए एक पुराण का बहुत अच्छा कथानक है। वह आपको कह देता हूं, आपको समझ में आ जायेगा। मधु और कैटभ का जीव। मधु का जीव प्रद्युम्म और कैटभ का जीव जो कि ये दोनों भाई—भाई थे। ये स्वर्ग में गये तो मधु का जीव प्रद्युम्मन हो चुका था। भगवान के समवसरण में प्रद्युम्मने ने पूछा कि कैटभ का जीव कहां जन्म लेगा ? भगवान ने कहा, श्रीकृष्ण महाराज के १६ हजार रानियॉं हैं। बांप का तो निर्णय हो गया पर मां कौन होगी तब नेमिनाथ भगवान कहते है कि वह देव यहां बैठा है। उसके गले में पड़ा सुन्दर हार है। सम्यकदृष्टि है बेसकीमती हार को श्रीकृष्ण महाराज को अभी जाकर के देने वाला है वो श्रीकृष्ण महाराज जिस महारानी के गले में ड़ालकर के गर्भाधान संस्कार करेंगे वहीं इसकी मां होगी। तो यह बात प्रद्युम्मन कुमार को पता चल गयी तो प्रद्युम्मन कुमार जाकर के अपनी मातेश्वरी रूकमणी से हाथ जोड़कर कहता है कि मां मेरा भाई जो है वो भी तेरा बेटा हो ऐसा उपाय करता हूँ तो मां कान पकड़ के गाल पर थपड़ लगाकर के कहती है कि बेवकूफ जो तेरे बांप के हाथ का काम है सो तू कहता है में करूंगा ? वह बोला मां तेरे में अक्कल नहीं अरे मैं १६ वर्ष तक विद्याधर के राजवंश में विद्याधरों के रहा हूं तो मुझको कितनी विद्याएं आती हैं और उन विद्याओं के प्रभाव से में सब कुछ कर सकता हूं। मैं रूप परिवर्तनी विद्या देता हूं तो श्रीकृष्ण महाहराज के मन में क्या है तुम्हें बतला देता हूं। श्रीकृष्ण महाहराज के मल में यह है कि मैं तो तेरा बेटा हूं और सत्यमामा का तेरा झगड़ा चलता है तो श्रीकृष्ण महाराज चाहते है कि सत्यमामा के गले में

वो दिया हुआ सुन्दर हार डालूं जिससे कि बेटा बेटा के बहाने से तो कभी तो बुलायेगा। कभी तो आयेगा। कभी वो आयेगा तो देखा देखी के बहाने से तो बोलचाल बढ़ेगी ही ओर झगड़ा मिट जायेगा। महाहराज श्रीकृष्ण का अभिप्राय समझकर रूकमणी के हृदय में यह बात आयी कि सत्यमामा का तो लड़का नहीं होना चाहिये तो किसका होना चाहिए ? उसकी सहेली जाम्बुवती से हो तो अच्छा है उसने कहा कि जाम्बवती का और श्रीकृष्ण महाराज का झगड़ा चलता है तुम जाकर के जाम्बवती के पास उसको कह दो। वह जाम्बवती के पास जाकर के कहता है कि देख इस इस तरह की बात है नमस्कार करके कहा, मुझे मातेश्वरी रूकमणी माता ने भेजा है और जल्दी का काम है समझो कि श्रीकृष्ण जो है घर सत्यमामा के गले में डालना चाहते है ये देख में तुघ्को मुद्रिका देता हूं सो तू इसको पहन ले ओर विचार कर कि मैं जाम्बवती नहीं हूं। सत्यमामा हूं, देख ले तेरे दर्पण में मुंह तो देख तो जाम्बवती सत्यमामा हो गई सो जाकर के तेरा काम बनाले। कहने से चली गयी। सत्यमामा तो बड़ी घमण्ड़ी थी तो श्रृंगार करने बैठी और उसका श्रृंगार भी देर तक हुआ नहीं तो ओर सहेलियों के बुलाने में भी देरी करदी। बैंड़ बाजे–आदि बहुत टाट से जाने वाली समझे और ये जो जाम्बवती थी अपना जैसा–तैसा था चली गई और सत्यमामा का रूप उसमें श्रीकृष्ण महाराज ने देखा नहीं ओर गले में हार ड़ाल दिया ओर उकस काम बन गया उसने अंगूठी उतार दी ओर कह दिया कि मै जाम्बवती हूं, सत्यमामा नहीं हूं। में तो जाम्बवती हूं। अब श्रीकृष्ण महाराज क्या कर सकते हैं अब तो राज–द्वेष रखना, लड़ाई–झगड़ा करना यह वो हो सकता है पर भाग्य की नियति का जो कोई भी नहीं मिटा सकता है तो यहां पर कहने का अभिप्राय यह है कि पहला–पहला जो भाग्य, यौवन और शक्ति जो यहां पर रहती है उसमें सिद्धि के चिन्ह् रहते हैं। उसको जल्दी ही कर लेती है। यह तथ्य है विवाह शादी का जो चिन्ह है उसको जल्दी ही कर लेने में सत्य है नहीं तो सिद्धि नहीं होती। हमको एक बात समझ में आ रही है कि लड़कियॉं ज्यादा हो रही है तो चाहे लड़का हो या लड़की, ब्रह्मचर्य तो सभी रख सकते है। तो लड़कियों को विवाह के लिए इतना आग्रह क्यों करना चाहिए। ये आथर्यक दीक्षा लेकर अपनी आत्मा का कल्याण क्यों नहीं करती ? तो यहां पर इतना कहना है कि अगर तुमको विवाह ही करना है तो उसके लिए एक उपाय है कि मांगीतुंगी सिद्व क्षेत्र में नमोकार मंत्र का जाप्य करने से पहले लोगों ने करोड़ों प्रकार की विद्याएं सिद्व की हैं। रामचन्द्र, हनुमान, सुग्रीव इत्यादिक ने।

तप करता यौवन गया, द्रव्य गया मुनिदान।

प्राण गये सन्यास में, तीनों गये न जान।।

देखों मुनि सुव्रत सागर जिसको कुंथलगिरी में जगन्नाथ सेठ ओर सुगन लाल सेठ इत्यादिक ने मिलकर के और मारवाड़ी लोग मिलकर के दीक्षा दिलाई थी। दीक्षा बड़ी भारी चीज है।। देखिये क्या चीज है ? ये भगवान की मूर्ति पाषाण की है, कोई धातु की है। किसी के सोने–चांदी की है। किसी की हरा, मोती,पन्ना, मानक की है, बस प्रलयकाल जब आयेगा उस समय मंदिर, मूर्ति, देवालय ये सब के सब खत्म हो जावेंगे, किन्तु दीक्षा माने क्या ? दीक्षा देने से, दिलाने से, अनुमोदना करने से ये सच्चे भगवान बने, तो मनुष्य को भगवान बनाना, यह दीक्षा का उद्देश्य है।अब चीज क्या है। कि यहां से रामचन्द्र महाराज , सुग्रीव,नील, महानील ९९ करोड़ मुनि मोक्ष गये है। मुनि महाराज। इनका भी पहले सम्बन्ध था। ये पद्मरूची नाम का सेठ, उसने देखा कि बैल खूब लड़े और इतनी जोर से लड़े कि एक तो मर गया एक मर रहा था तो पद्मरूची सेठ ड़रते ड़रते आ रहा था और उसने उसके कान में णमोकार मंत्र दे दिया। उसके प्रभाव से देव हुआ और वही पद्मरूची सेठ का जीव रामचन्द्र हुआ और बैल का जीव सुग्रीव हुआ। जो यहां से मुक्त हुए।

मांगीतुंगी

५ अक्टूबंर १९७०

आचार्य आदिसागर महाराज अंकलीकर की समाधि पर विचार बड़े धड़े की नसिया अजमेर १८—२—९३

१— पं० विद्याकुमारजी सेठी

मंगलाचरण — धर्मः सर्व सुखाकरो हितकरो धर्म बुधाश्चिन्वते

धर्मेणैव समाप्यते शिवसुखं धर्माय तस्मैनमः

यहां न तो धन को महत्व है ना संसार के सुखों को महत्व है अगर सुख भोंगो में और धन में ही महत्व होता तो भरत चक्रवर्ती से लेकर के महावीर स्वामी तक जितने भी बड़े—बड़े महाराज हुए हैं उन्हें अपने वैभव का परित्याग नहीं करना पड़ता और आज जब हम इस मंडप में पधरे बड़ी विनम्र निवेदन मैं आपको बार बार कह रहा हूं कृपया आपको जहॉ स्थान मिले आप बैठने का कष्ट करें।

गुरवःपांतु नो नित्यं ज्ञानदर्शन नायकाः

चारित्रार्णं गंभीरा मोक्षामार्गोपदेशकाः

आज हमारे नगर का बड़ा सौभाग्य है कि हम दो उत्सवों को अपने यहां पर देख रहे हैं और इसमें एक केशलोंच का सौभाग्य तो हमो पहले भी मिल चुका है लेकिन दूसरा सौभाग्य हमारे लिए नया है और ये दोनों मिलकरके सोना और सुगंधी का कार्य कर रहे हैं बन्धुओं इस युग के जो आदिह प्रवर्तक है हयुिग का मतलब ये हैं कि हपंचम काम चल रहा है लेकिन पंचम काल में बीच बीच में विक्षिप्ती भी होती चली जाती है बीच बीच में कुछ अभाव सरीखा हो जाता है फिर और आचार्य खद्योत के समान चमकेंगे कभी धर्म का प्रकाश हो जायेगा कभी धर्म का प्रलाप हो जायेगा। इस प्रकार से आचार्य कहते हैं ऐसे समय में करीब— करीब यह मुनि परम्परा बंद सी हो गयी थी उस समय के अन्दर जो आज जिनकी जन्म जयन्ति है उन आदिसागर जी महाराज का हम बड़ा आभार मानते है जिन्होंने इस प्रवृति को समाधि के हसमय जो अड़तालीस मुनि जिनके साथ में मौजूद थे। इस प्रकार की कठिन

साधना जिन्होंने अपने आप से किया उन मुनिराज के सौभाग्य से शुभ अवसर से हमको भी यह प्रेरणा प्राप्त हो रही है। उन्होंने इस युग के प्रवर्तक ऐसे आचार्य शान्ति सागरजी महाराज है उनके भी वो प्रेरक थे। तो ये दोनों विभूतियाँ ऐसी रही कि जो कि चीज एक जैसा कहा जाता है।

शशिना च निशा निशया च शशिः

शशिना निशया च विभाति नभः

चन्द्रमा के द्वारा आकाश की शोभा है आकाश के द्वारा चन्द्रमा की शोभा है और दोनों मिल करके उसे और भी सुशोभित कर सकते हैं और भी कहा है

पयसा कमलं कमलेन पयः

पयसा कमलेन विभाति सरः

मणिना वलयं वलयेन मणि

मणिना वलयेन विभाति करः

जो जल होता है उससे तो कमल कि शोभा है और कमल से मिलकर के तालाब की शोभा है दोंनो से मिलकर के तालाब की शोभा है। हीरे माणिक्य से तो गले की शोभा है और सोने की चूड़ी से मिल करके हीरे की शोभा है और दोनो को मिलने से हाथ की शोभा है। इसी तरह से आचार्य शान्ति सागरजी महाराज से हमारे संघ की शोभा रही इधर आ० आदिसागरजी महाराज से पूर्व प्रेरक रहे दोनों ही संघ नायक दोनों ही गुरू शिष्य दोनों ही इस परिपाटी को चलाने वाले यह हमारे दिगम्बर समाज की बड़ी शोभा है। आज दिगम्बर जैन समाज जो टिकी हुई है वह निर्ग्रन्थ मुनि राजों की कृपा से टिकी है कितने लोग इनको नग्न देख करके कह देते हैं कि यह दिगम्बरी जैनी है चिन्ह है ये बड़े-बड़े शासें में जहां प्रत्येक पुजारी है उनको देखकर भी गर्वमेन्ट भी घबरा जाती है कि कहीं कोई उपद्रव नहीं हो जाये वैसे रहेंगे शांति ही उनके पधारने पर होती है। जैसा पोप प्रकरण है कि असेम्बली में गये और घबरा गये और फिर भी लोगों ने कहा आओ तो धर्म का बड़ा विस्तृत रूप

है ये दोनों ही विभूतियों ने हमारे समाज का बड़ा भारी कल्याण किया है और उसी के लिए सब स्तम्भ है। सब खम्भे हैं और वो नहीं होते तो न आचार्य शांतिसागरजी महाराज दीक्षित न होते तो औरत आगे की परम्परायें चलती ये दो परम्परायें हैं। इस समय आचार्य शांतिसागरजी महाराज पुण्यवान है और इधर महावीर कीर्तिजी महाराज है। इनकी परम्परा ये दोनां एक ही धर्म के हैं एक ही सिद्वान्त पर चलने वाले हैं। इनमें कोई अन्तर नहीं है। समाज के लोग पूछते थे कि ये क्या बात है हमारे समझ में नहीं आती है। इसलिए मैंने दो शब्द इसलिए कहे है कि ये बड़ा सौभाग्य है कि दोनो विभूतियॉ दोनो आचार्य संघ दोनो परिपार्टी का रूप हम एक साथ में देख रहे हैं। यह हमारा अजमेर नगर का सौभाग्य है– और सुनने भी सब आते हैं देखने भी सब आते हैं। अब इन्होंने क्या क्या कार्य किया है ये तो अभी थोड़े समय में नहीं कहां जा सकता लेकिन यह बड़ा सौभाग्य कि हम यहां पर महावीर कीर्तिजी महाराज को सन्मति सागरजी महाहराज के रूप में देख सकेंगे। आपने नहीं देखें होंगे। मैं तो उनके साथ में रहा हूं। साथ में पढ़ा हूं। उनके पिता ने उनका नाम महेन्द्र सिंह रखा था और वो मुरैना में और इन्दौर में हमारे साथ में पढ़े हुए हैं और यहॉ न्याय शास्त्र के विषय में बड़े गम्भीर थे। आगे जाकर के नासिक में तो १५ दिन महाराज के साथ रहा और बड़ा सौभाग्य प्राप्त हुआ। अब उनकी परम्परा को देख रहे है। ये परम्परा का परिचय हमें कम प्राप्त था इस समय में जो लोच किया हो रही है। यह बड़ी मार्मिक किया है। ये दो ही बातें है जो बाहर से की जाती है एक तो अचेलक्य यानि नग्न होना दूसरा केश लोंच होना और जगह भी लोंच होते हैं। एक दिन किया दूसरे दिन किया लेकिन इस प्रकार से उसकी लोंच संज्ञा तो जरूर है लेकिन ये तो साक्षात् चीज है ये आपको देखने को नहीं मिली न किसी प्रकार का मसाला है न किसी चीज का उपयोग है न किसी प्रकार की चीज है। यह किया दो महीने में तीन महीने चार महिने में होती है। दो महीने में यह उत्कृष्ट मानी जाती है क्योंकि बाल कमजोर होते है और ज्यादा मेहनत करनी पड़ती है ज्यादा जोर लगाना पड़ता है और तीन महीने में मध्यम होती है और चार महीने में जघन्य होती है और आजकल के ज्यादा मध्यम का प्रचार है क्योंकि ज्यादा मध्यम है। इस समय के युग में भी तो परिवर्तन आ गया। कहां १२० वर्ष की उत्कृष्ट आयु कम होते होते कम होती जायेगी ऐसे समय में यह लोंच किया बड़े साहस को देने वाली है बल्कि यह किया तो देखने की नहीं है तकलीफ है कि कब ऐसा सौभाग्य आये कि हम लोग भी इसको देखें ,लेकिन इतना नहीं हो तो थोड़ा सा तो हमको संतोष होता ही है। विवाह नहीं हुआ तो क्या हम बारात में तो गये।

हमने लोंच नहीं किया क्यों ? हमारा सामर्थ्य नहीं है तो कम से कम यह सौभाग्य तो अवश्य मिला है कि कि मुनिराजों के और माताओं के लोंचों को देखा और पुण्य का बंध किया है।। अधिक समय आप लोगों का नहीं लेकर बात यही समाप्त करता हूं।

२– ब्र० मैनाबाईजी

मंगलाचरण – तापिच्छगुच्छरूचिरोज्वल नेमिनाथ

घोरोपसर्ग विजयिन् जिन पार्श्वनाथ

स्याद्वाद सूक्ति मणि दर्पण वर्द्धमान

त्वद् ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम्

आज परम पूज्य आचार्य आदिसागरजी महाराज का समाधि दिवस है। परम पूज्य आचार्य आदिसागरजी महाराज का परिचय महाराज श्री ने अभी दिया और भी आपको दर्शन सागरजी महाराज आपको बतलायेंगे और भी साधु बतलायेंगे और आप सुनेंगे। आचार्य आदिसागरजी महाराज उत्कृष्ट संत थे और बड़े भारी तपस्वी थे। साधना थी कठोर से कठोर उनका आज हम समाधि दिवस मना रहे हैं और इसलिए सर्वप्रथम उनका गुणगान गाया जाना चाहिए और हम उनके चरणों में बार बार नमस्कार कर हम भगवान से यही प्रार्थना करते हैं कि उनकी आत्मा को शांति लाभ हो और हम भी इस प्रकार अपनी आत्मा का कल्याण करते हुए समाधि पूर्वक मरण करेंगे और उनके गुणों की प्राप्ति करें अभी सभी लोगों ने बताया कि पूज्य आचार्य सन्मतिसागरजी महाराज परम तपस्वी संत और उनके जितने भी चमत्कार हुए हैं और भी भाई साहब ने परिचय दिया है। मैं आपका इतना बखान करूं तो इतना कह नहीं सकती। क्योंकि कहा है– सब धरती कागज करें वनराज और स्याही समुन्द्र की करें तो गुरू गुण लिखा न जाये "। इन जीवों में से गुरू का वर्णन करने में कौन सामर्थ्य है। सर्वप्रथम तो अपन यही देखें संतो का त्याग अनोखा है। देखों तो इनके कार्यो को संसार के भोंगों को ठोकर मारी है माया को और गृहस्थों का त्याग अनोखा है। देखों तो इनकी माया को और संसार शरीर

भोगोंसे खूब सजाई काया को समझाना अभी आप क्या देख रहे थे। महाराज महाराज श्री अपने हाथों से घास के माफिक बालों को उखाड़ रहे थे। क्या वेदना नहीं होगी क्या दर्द नहीं हो रहा था क्या अन्दर पीड़ा नहीं हो रही थी, लेकिन विचार करिये जहाँ पर संसार शरीर भोगों से विरक्त पड़ा है। यानि संसार के भोगों से विरक्त हो चुके हैं और अपने हाथों से उखाड़ रहे है। इसका कारण ये ही है कि हवे घास के समान शरीर से ममत्व भाव का त्याग कर चुके हैं। सर्व प्रथम अन्दर से कषायों का त्याग किया जाता है बाद में केशों का केश लोंच किया जाता है। क्योंकि एक तो नग्नता का परिचय देना और केशों का उखाड़ना ये कोई बच्चों का खेल नहीं है। अन्दर विषय वासनाओं से और लोक जाल होने से यहां "परम दिगम्बर मुद्रा धरने पर घर नहीं सके दीन संसारी" आजकल एक बच्चा खड़ा नहीं होता है और तौलिया–तौलिया अरे क्या तौलिया करेगा तो तौलिया से लिपटेगा स्नान करेगा तो नंगा स्नान नहीं करेगा जिनके अन्दर जन्म से ही विषय वासना लेकिन आज जो महान तपस्वी संत अपने देश के ऊपर बैठे हैं जिन्होंने विषय वासनाओं का त्याग किया है और भारी जवानी में भोगों को लात मारकर के संसार के भोगों से निवृत होकर के अपनी आत्मा के कल्याण के मार्ग पर लगे हुए हैं। साधु जीवन सार है पर भैया" केश लोंच की मार है साधु जीवन सार है " पर केश लोंच की मार किन्तु कर्मो की प्रक्षाल है " पर आखिर जय जयकार है " मजा है देखों" दिगम्बर वेश प्रभु म्हारा मजा कहां ना जाये इस कंगाली का देखों दिगम्बर बेष म्हारा मजा सहा न जाये इस कंगाली का देखों धन्य दिगम्बर साधुको" नग्न दिगम्बर रहते खड़े खड़े हाथों में भेजन करते काम क्या थाली मजा सहा न जाये इस कंगाली का अरे भैया ये दिगम्बर भेष ये कंगाली का भेष लेकिन यहां पर कंगाली है लेकिन आगे माला माली है, और यहां माला माल है और यहाँ माला माल रहे और आगे फाकम फांक है कुछ नहीं है। आगे क्यों अरे भैया जहाँ त्याग है जहाँ संयम है जहाँ पर त्याग नहीं है। संयम नहीं है रात दिन खाने में पीने में भोगों में लगे है। एक सैकण्ड हमको समय नहीं है। साधुओं की सेवा करने का समय नहीं है और हम चाहे कल्याण हो जाये तो कल्याण बहुत दूर है। इसलिए साधु जीवन सार है। साधु समागम अति पुण्य उदय आते हैं। कहा भी है।

जब साधु समागम आवे, पुण्य अतिशय आवे।

जब पाप उदय में आवे मुनि के आराधना में मन नहीं लागे।।

बिना पुण्य के साधु समागम नहीं मिलता आज पुण्य उदय हुआ है। अजमेर नगरी को साक्षात् समवशरण की रचना है और चलते फिरते तीर्थंकर हैं। उनकी समवशरण के मध्य में बैठ करके हम पुण्य उपार्जन कर रहे हैं और उनकी सेवा दयावृति और दान देकर के अपने जीवन को सफल बना रहे हैं और उनकी सेवा करने से मेवा मिलती है। जहाँ साधु विराजमान है वह नगरी भाग्यवान है।। वहां के र हने वाले भी बड़े भारी भाग्यवान है। कोई तो महाराज नमोस्तु कहते है और कोई आहार दान देते है। कोई देखते है कोई कहते महाहराज आ गये कोई कहते आहार हो गया, किसके हुआ फलाने चन्दजी के हो गया। तुमको क्या मिल गया विचार करों जो इन हाथों से देगा वही हाथ से लेगा। इसलिए प्रत्येक जीवन का कर्तव्य है कलिकाल के अन्दर ऐसे महान सन्तो का पंडित आशाधर जी लिखते हैं कि धन्य है इनके माता पिता को जो ऐसे रत्न पैदा हुए हैं और त्याग तपस्या के द्वारा अपनी आत्मा का कल्याण और हम भी अपनी आत्मा का कल्याण करें इनके माध्यम से तभी हम अपने जीवन को सार्थक बना पायेंगे इसलिये आचार्य सन्मति सागर जी महाराज के अनेक चमत्कार हुये हैं अनेक ऋद्धियां हुई है और इस समय हमारे पास इतना समय नहीं क्योंकि महाराज भी बोलेगें ऐसा परिचय दिया लेकिन कई तरह के चमत्कार पदमावती के द्वारा आरती होना चरण निकल के आना, रास्ता बता देना, पानी नहीं था घडे में पानी आ गया बिच्छू से कटा हुआ ठीक हो गया एक–एक परिचय आपको पुस्तक के द्वारा बतलायेंगे आचार्य श्री द्वारा त्याग तपस्या और कितने लम्बे उपवास और कितनी साधना और कितना उनका नियमव्रत है हम थोडे समय में बता नहीं सकते इसलिये जितना आपने सुना है वह बहुत है और समय मिला तो और कभी आपको बतायेंगे। इसलिये भैया पंचम काल में ध्यान रखें पंचम काल में एक हथियार है हमारे पास में तो दान और पूजा इन हाथों से दीजिये और साथ लीजिये क्योंकि खाया खोया बह गया और इन हाथों से दान देकर के और अपने जीवन को सफल बनायें पंचम काल में चलते फिरते तीर्थकर है और नुक्ता छीनी मगर अगर करने की कोई दरकार नहीं है यदि मगर में पड गये तो कुछ पल्ले पडने वाला नहीं है इसलिये मगर अगर और किन्तु परन्तु को छोड करके अपने आत्म कल्याण के लिए मुनि को आहार दान दीजिये, जो भक्ति से आहार दान देता था उन्हीं के घर पर रत्नों की वृष्टि होती थी इसलिये घर–घर चौका लगा करके पुण्य बंध करो और आये हुये साधुओं की सेवा करों और दान देकर के मनुष्य पर्याय को सपफल बनाओं अन्यथा भैया कमा करके बाल सफेद हो गये पैर दुखने लग गये और यह मधूमती चाट–चाट कर पूरा कर दिया और कुछ भी पल्ले पडने

वाला नहीं हैं लेकिन घबराना नहीं जहाँ नारी के बिना कुछ नहीं है इसलिये नारी हमारी सर्व उत्तम है "नारी नारी मत कहो नारी नर कि खान नारी से उपजे चौबीसों भगवान भैया इनके बिना कुछ नहीं सारी ठाठ बाट इनका ही है इसलिये इनकी बात को मानना लेकिन एक बात आचार्योंने कह दी है लेकिन इनकी बात सुनना लेकिन मान करके नहीं चलना मान करके चलोंगें तो घर का दिवाला निकल जायेगा इतना अक्ल नहीं है लुगाई की बात मान करके अपने यां बाप भाई के साथ में व्यवहार करता है और कार्य करता है तो कभी भी सपफलता को प्राप्त होती है लेकिन बात जरूर सुनना उजाडना नहीं उजाडोंगें तो बुढापे में खटपट हो जायेगा और छत्तीस का आंकडा हो जायेगा तो जीवन बरबाद हो जायेगा उसकी बात सुनना और सुन करके मन में रखना लेकिन करना है स्वभूमि स्वभूति प्रकाशिनी और परभूति तीन प्रकार की भूमि होती है इसलिये ज्यादा समय नहीं लूंगी में और इसी प्रकार अपने गुरूओं की सेवा वैयावृत्ति करते हुये और पति और पत्नि जोडे से आहार दान देओ यहाँ तो आहार दान दे रहे हो ऊपर देव जय जयकार कर रहे हैं रत्नों की वृष्टि नहीं हो रही अभी लेकिन पिफर भी देव क्या कर रहे हें जय जयकार कर रहें और इन्दु कहती है कि हे भगवान हमारा हजार भव तू लेले और एक भव हमको मनुष्य पर्याय देदे वह पर्याय इतना अमूल्य है हमारा यह मनुष्य पर्याय इस प्रकार से सफल बनाने के लिये यह एक हथियार मिला है और यह एक माध्यम है जिनके माध्यम से हमारी आत्मा का कल्याण हो सकता है। सोचे हम स्वाध्याय वगैरह करके कल्याण कर लेगें त्याग की कोई दरकार नहीं है। लेकिन जैन धर्म त्याग के ऊपर टिका है बिना त्याग के चिरकाल में कल्याण नहीं होता है अंधेरे के अन्दर रोशनी का सहारा लेना ही होगा इसलिये पंचम काल में गुरूओं का सहारा लेना ही पडेगा तभी आत्मा का कल्याण कर सकोंगे।

३ – श्री १०८ परमपूज्य उपाध्याय समता सागर जी महाराज

मंगलाचरण – श्री कुन्दकुन्द मुनि वन्दन हेतु गये गिरनार

उन्हीं के चरणों में बारम्बार नमन हमारा।

प्रातः काल का समय था और साधूचर्या के लिये जा रहे थे जब वह ईर्यापथ से गमन करते हुये आगे पहुँचे तो पहुँचने के उपरान्त उन्होंने एक बालक को रोते हुये देखा तो मुख ज्ञान के वे पारंगत थे और अर्थ ज्ञान के वे

पारंगत थें और अर्थ ज्ञान अर्थात् उन्होंने निमित ज्ञान से जान लिया कि भारतीय वसुन्धरा पर यानि उत्तर भारत में बारह वर्ष तक अकाल पडेगा आकर के उन्होंने कई शिष्यों को उपदेश दिया कि हमारा यह मुनि धर्म उत्तर भारत में नहीं पलेगा और हमको दक्षिण की तरफ बिहार कर देना चाहिये कुछ मोटी साधु थे जिनको वात्सल्य भाव था लेकिन भाव के साथ वो यह भूलते जा रहे थे कि मरेह के कारण इन साधूओं के अन्दर बारह साल में क्या होगा इनकी स्थिति कहीं डावाडोल तो नहीं हो जायेगी यह विचार नहीं किया उन्होंने कहा हमारे पास कोई कमी नहीं है हम आपकी चर्या निर्विघ्न चर्या करायेंगे किन्तु चौबीस हजार मुनिराजों के संघ में आधा संघ आचार्य भद्रबाहू के साथ दक्षिण में चला गया और आधा संघ उत्तर भारत की तरफ रह गया जब इस प्रकार से इस सम्पूर्ण भारतीय वसुन्धरा पर हरे रंग की साडी बिछ गई और लोग खाने के लिए लालयित थे एक–एक दाने के लिये तरसने लगे क्योंकि हर इंसान को हर वक्त धन काम में नहीं आता। धन वही काम में आता है जहाँ सामग्री का विकय होता है किन्तु जहाँ साम्रगी का विकय नहीं किया जाता है तो वहां धन कुछ भी नहीं कर सकता वह श्रावक अपने अपने उदर की पूर्ति कर रहे थे किन्तु साधू की चार्य के लिये एक दिन एक मुनिराज पीछे रह गये आहार करके आ रहे थे तो उनका पेट चीरकरके भोजन लिकल करके खा लिया तो यह सब देख करके श्रावकों ने विचार किया अब कठिन हो गया, इस मुनिचर्या का पालन करना तो उन्होंने कहा कि आप मुफ्त रूप से भोजन कर लिया करो।। श्रावक के घर जाते थे पात्र लेकर के जो भोजन वह दे दिया करते थे वह अपने निवास स्थान पर लाकर के खा लेते थे पिफर कुत्ता भौंकना शुरू कर दिया तो उन्होंने एक लाठी रखना प्रारम्भ कर दिया वस्त्र पहनना प्रारम्भ कर दिया छः–छः महीने हो जाते लेकिन केशलोंच नहीं करते थे। खाने का भी कोई ठिकाना नहीं था। दिन में कई बार भी खा लेते थे यह चर्या जब बाहर साल तक कई बार चलती रही और दक्षिण के साधूओं ने उत्तर कि तरफ विहार किया तो स्थूलभद्र आदि आचार्यों ने कहा कि आप प्रायश्चित्त ले लीजिये अपने आचार्य से प्रायश्चित्त लेकर के अपने दोषों का निराकरण करके पूर्णरूप से दिगम्बर अवस्था को स्वीकार करों लेकिन लोलुपता वश उन्होंने इंकार कर दिया इन्कार करने के उपरान्त उन्होंने मारना शुरू कर दिया आपस में झगडा हुआ तो जो कूर स्वाभावी थे उन्होंने मारा वह शान्तिठठ महाराज थे वो मरकार के व्यन्तर बन गये व्यंतर बनने के उपरान्त वह साधूओं को परेशान करना प्रारम्भ किया तो उन्होंने लडकी के रूप में उनकी पूजा की इस प्रकार से उन्होंने सताना बंद कर दिया इस प्रकार उस समय भारतीय

वसुन्धरा पर दिगम्बर और श्वेताम्बर आम्नाय का जन्म हो गया वहाँ से परम्परा लागू हो गई और उस श्वेताम्बर आम्नाय में अनेक पंथ प्रारम्भ हो गये मूर्ति पूजा स्थानकवासी मंदिर मार्गी अनेक पंथ प्रारम्भ हो गये उस समय इस दूषित वातावरण कई वर्षों तक चलता रहा लेकिन किसी भी साधू की हिम्मत नहीं थी कि वह भगवान् महावीर की वाणी को यथावत उपदेश दे सके लेकिन पाटलीपुत्र जिसको हम आज के युग में हम पटना कहते हैं वहाँ पर एक मिटिंग बुलाई गई इस भारत भूमि के सभी साधू वहाँ पर पहुँच गये और सबने अपना—अपना उपदेश दिया और अपनी आचार्य परम्परा के आचार्य के विषय में बताया गया किन्तु उसके बाद भी सबने अपनी—अपनी परम्परा को नहीं छोडा या अपनी पंछी पंख डेविड, पंथ आदि अनेक प्रकार के पंथ भद्रबाहु के बाद बिशाखचार्य हुये जब विचार किया कि हमारे गुरू को ग्यारह अंग चौदह पूर्व का ज्ञान या और हमको दस पूर्व का है उसके बाद सातवीं शताब्दी में शताब्दी में आचार्य धरषेराचार्य हुये उनके दो शिष्य थे भूतबली, पुष्पदंत, धारषेण आचार्य ने उन दोनों को उपदेश दिया, पढाया फिर उन्होंने षडखण्डागम शर्स्त्र को लिखा भूतबली और पुष्पदंत दोनों ने एक दूसरे से मिकल करके और एक दूसरे से सम्भाषन करके और उसके बाद आठवीं शताब्दी में कुन्दकुन्द आचार्य हुये। कुन्दकुन्दाचार्य के बाद नवमी शताब्दी में तत्वार्य सूत्र के लेखक उमा स्वामी हुये और दसवीं शताब्दी में समन्तभद्र आचार्य हुये। जिन्होनें रत्नकखड श्रावकाचार लिखा ग्यारहवीं शताब्दी में पूज्यपाद स्वामी हुये जिन्होंने जैनेन्द्र व्याकरण और इष्टोपदेश आदि अनेक ग्रन्थ लिखे और बाहरवीं शताब्दी में मान तुंगाचार्य हुये जिन्होंने भक्तामर स्रोत लिखा और तेरहवीं शताब्दी में अकलंक देव हुये जिन्होंने जैन धर्म की ध्वजा फहराई थी वाद विवाद में विजय पाकर के उन्होंने राजवार्तिक लिखी थी और उसके बार चौदहवीं शताब्दी में वीरसेन आचार्य हुये जिन्होंने भूतवलि और आचार्य पुष्पदन्त ने षडखण्डागम नामक शास्त्र की टीका लिखी और पन्द्रहवीं शताब्दी में वीरसेन आचार्य हुये एक ने हरिवंश पुराण लिखा और एक ने आदि पुराण लिखा और डनहीं के समय में अमृतचन्द्र आचार्य हुये जिन्होंने समयसार की टीका लिखी और सौलहवीं शताब्दी में कौन हुये और सोलहवीं शताब्दी में उन्होंने सिद्धान्त चकवर्ती नेमिचंद्र आचार्य हुये वीर निर्माण की सोलहवीं शताब्दी में उन्होंने गोम्मटसार आदि अनेक शास्त्र लिखे और उसके बाद अनेक आचार्य हुये २० वीं शताब्दी में आचार्य आदिसागर जी हुये और उन्हीं के समय में आचार्य शान्तिसागर दक्षिण वाले। उसी समय उत्तर भारत में आ०

शान्तिसागर छाणी वाले हुये, दोंनों का चातुर्मास ब्यावर में हुआ जब हम मंगलाचरण करते हैं तो मंगलाचरण में हम कहते हैं।

"मंगलम भगवान् वीरो मंगलं गौतमो गणी"

"मंगलम कुन्दकुन्दाद्यों जैन धर्मोस्तु मंगलं"

भगवान् महावीर के उपरान्त गणधर गौतम का नाम लिया जाता है, और उसके बाद कुन्दकुन्दआचार्य का नाम लिया जाता है कुन्दकुन्द आचार्य के बीच में कितने आचार्य हुये उनका नाम क्यों नहीं लिया जाता है। क्या वो नहीं थे ? थे पर प्रकाश में नहीं आये, इसलिये लोग उनको जानते नहीं। इसका मतलब वे नहीं थे। ऐसा कहना महा मूर्खता की बात हैं क्योंकि जो जिसको जातना है उसी का नाम ले देता है आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी को किसने देख किसी ने नहीं देखा फिर भी हम उनका गुणगान करते अर्चना करते हैं उसी प्रकार आचार्य आदिसागर जी महाराज को हमने नहीं देखा, अगर हम उनके गुणगान करते हैं तो हमको साक्षात गुरू भक्तिका फल प्राप्त होगा। आज जगह–जगह कुन्दकुन्द भारती, कुन्दकुन्द वाणी, कुन्दकुन्द भवन, कुन्दकुन्द सेवासदन अनेक प्रकार के नाम से पत्र पत्रिकाऐं निकल रहीं है कुन्दकुन्द आचार्य ने जो कार्य आचार्य आदिसागर जी ने किया वो आचार्य शांतिसारग जी ने नहीं किया, जो कार्य शांतिसागरजी ने किया वो कार्य वीर सागरजी ने नहीं किया। पूज्य कुन्दकुन्दाचार्य का नाम लेते हैं क्योंकि उन्होंने विदेह क्षेत्र में जो भी प्रवचन सुना भगवान् की दिव्य ध्वनि से उसको सुनकरके फिर ग्रन्थों की रचना कि ऐसे उन कुन्दकुन्द आचार्य को और जितने भी आचार्य हुये उन सभी को मैं सर नवाकर नमस्कार करते हैं। इस भारतीय वसुन्धरा पर वीरनिर्वाण होने के बाद बींसवी शताब्दी में सर्वप्रथम आचार्य आदिसागर जी (अंकलीकर) हुये उनकी अनेक शाखायें निकली, उसी समय आचार्य आचार्य शान्तिसागर जी हुये उनके बाद आ० वीरसागर उसके बाद शिवसागर। उसके बाद धर्मसागर उसके बाद अजीत सागरजी और जो पांचवें आचार्य हुये वहाँ से झगडा आरम्भ हो गया है पंचम काल और पांचवें आचार्य है तो पंचमकाल के हिसाब से यह पांचवें आचार्य की बदली पर झगडा हो जाता है तो पंचम काल का ही प्रभाव कहना चाहिये ये पंचम काल का प्रभाव है तो झगडा प्रारम्भ हुआ तो पांचवें पट्ट से इसलिये यह पंचमकाल का दोष है जैसी आचार्य परम्परा है श्रावक श्राविकाओं को उनके लिए तो भी पूज्य है चाहे दो आचार्य बन जाओ चाहे चार आचार्य बन जाओ २८ मूलगुणों का पालन

सभी आचार्य व सभी साधू करते हैं थोडा सा अन्तर रहता है, थोडा सा यश जो होता है वह यश किसी के देने से प्राप्त नहीं होता वह अपने आप प्रापत हो जाता है, जिस प्रकार से सिंह वन में रहता है तो वह स्वमेव राजा बन जाता है उसे राजा बनाने की आवश्यकता नहीं पडती है, वह वन में रहता है और अपने बल से एवं स्वयं के पराकम से स्वयं राजा बनता है इसी प्रकार से हमको जिन आचार्यों ने इस वसुन्धरा पर ऐसी—ऐसी विभूतियां दी है और उनके पद चिन्हों पर हम लोग चले तो हमारा कलयाण होगा और श्रावक श्राविकायें चलेगी तो उनका भी उपकार होगा तो उनका उपकार हम कभी भूल नहीं सकते और उन्होंने जैसा कहा हम उनके पद चिन्हों पर चलना चाहिये किन्तु आज के युग में जब मनुष्य अपने चारित्र को पूर्ण रूप से पालन करता रहता है और चारित्र पालन करते हुये वह समाधि सहित मरण कर लेता है तो उसका चारित्र धारण करना सार्थक हो जाता है तो इसलिये हमारे लिये भातरवर्ष के सभी आचार्य पूज्य है हम सभी को सांठटांग नमस्कार करते हैं भद्रबाहू आचार्य से लेकर आचार्य आदिसागर जी आचार्य शान्तिसागर जी, महावीर कीर्ति जी, आचार्य वीरसागरजी, आचार्य सन्मति सागरजी, और भी जितने आचार्य हैं उन सबको हम साष्टांग नमस्कार करते हैं। जिसका यशस्कीर्ति नामकर्म का उदय होगा उसका नाम कभी भी कोई मिटा नहीं सकता है भगवान् महावीर का नाम कभी भी कोई मिटा नहीं सकता है, कुन्दकुन्द आचाय्र का नाम मिटा दो नहीं मिटा सकते हाथ पैर थक जायेंगे रेलगाडी घिस जायेगी टायर घिस जायेंगे लेकिन नाम नहीं घिस सकता है वह तो नाम उस समय तक रहेगा जिस समय तक उनसे भी बढकर कोई आचार्य नहीं होगा। महावीर भगवान् का नाम उस समय तक रहेगा जब तक चतुर्थ काल रहेगा, राजा श्रेणी का जीव पदम नाम का तीर्थकर बन जायेगा तब भगवान् महावीर को लोग भूलने लगेंगे उससे पहले भगवान् महावीर का नाम बना रहेगा कुन्दकुन्द आचार्य का नाम बना रहेगा। आ० आदिसागर जी (अंकलीकर) वाले आचार्य शान्तिसागरजी और जितने भी भारत में आचार्य हैं उन सबको हमारा कोटि—कोटि प्रणाम है।

समाप्त

४ — प०पू० उपाध्याय चंद्रसागर जी महाराज का प्रवचन

मंगलाचरण — धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो धर्मं बुधाश्चिन्वते

धर्मेणैव समाप्यते शिव सुखं धर्माय तस्मै नमः

धर्मान्नास्त्यपरः सुह्रद्भवभृतां धर्मस्य मूलंदया

धर्मे चित्तमहंदधे प्रतिदिनं हे धर्म मां पालय।।।

बंधुओं — आज हम आचार्य परम पूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्य आदिसागर जी महाराज का ५१ वां समाधि दिवस मनाने जा रहे हैं जो कि २० वीं शताब्दी में हुये थे और आचार्य आदि सागरजी महाराज का विहार इस तरफ न होने के कारण दक्षिण में ही रहे उनका नाम इसलिए उत्तर भारत में प्रसिद्ध न होकर दक्षिण भारत में ही उनकी प्रसिद्धी रही। आज उनका समाधि दिवस मना करके उनके बताये हुये आर्दशों पर चले किस प्रकार से उन्होने संयम धारण करके त्याग करके और अपनी इस मनुष्य पर्याय को सार्थक बनाया, उसी प्रकार से हम अपनी ये भावना बनायें कि हे प्रभू हे आचार्य आदिसागरजी महाराज कब मेरा वो दिन हो जब मैं भी आप जैसी समाधि कर, आपकी शरण में आंऊ कब मेरा वो दिन आये जब में संयम को धारण करें जिससे कि हमारा कल्याण होगा, हम और आप अपने आपको परम मुनि भक्त कहते हैं हमारा कत्तव्य है कि किसी भी प्रकार के वाद विवाद में न पड करके जो आपको सच्चा मार्ग बतलाया है उसका स्मरण करना चाहिये और उसी ओर चलेंगे तभी हमारा और आपका कल्याण हो पायेगा अन्यथा कल्याण नहीं हो सकेगा। इसलिये आज समाधि दिवस मना करके अपने हदृय में वह समभाव जागृत करें और संयम को धारण करें जिससे कि हमारा स्मरण भी होवें। जो समभवों से कर्मो से लडता है संयम से मरता है और जो समता भाव धारण करके जो कर्मों के बंधन को ढीला कर देता है और समय आने पर वे बंधन शीघ्रता से टूट जाते हैं इसलिये आचार्य कहते हैं कि जो चार आराधनाओं को धारण करके मरण करता है वास्तविक में उसी का सच्चा मरण है जो कि मृत्यु को मारने वाला है बंधुओं मृत्यु को ही मार देना उसका नाम ही निर्वाण है हम सिद्ध अवस्था की प्राप्ति के लिये संय धारण करें जिससे कि हमारा आपका कल्याण हो सकें और सुख की प्राप्ति कर सकें। हम लोंगों का जन्म लेना या न लेना व्यर्थ जाता है जो यदि आज के दिन आप हम सब लजोग अपने हदृय में संयम धारण करें कुछ त्याग करें।

५ — परम जूज्य श्री १०८ आचार्य दर्शनसागर जी का प्रवचन

मंगलाचरण — जय बोलो चाबासा भगवान् की जय

जय बोलो आचार्य आदिसागरजी महाराज की जय

जय बोलो शांतिसागर जी महाराज की जय

जय बोलो वीरसागर जी महाराज की जय

जय बोलो महावीरकीर्ति जी महाराज की जय

जय बोलो शिवसागर जी महाराज की जय

जय बोलो धर्मसागर जी महाराज की जय

जय बोलो अजित सागर जी महाराज की जय

जय बोलो आचार्य तपोनिधी सन्मति सागर जी महाराज की जय

भव्य जीवों भव्य आत्माओं आज आप सब एकत्रित हुये हो आज आचार्य आदिसागर जी महाराज की ५१ वीं समाधि सदिवस मनाने के लिये हर जीव यह चाहता है कि मेरा समाधि सहित मरण होंवे मैं संसार के दुखों से दूर जो एक दफा समाधि सहित मरण करता है वह नियम से सात या आठ भव में मोक्ष की प्राप्ति करता है। पर समाधि सहित मरण होना चाहिये समता भाव से शरीर छूटना चाहिए समता भाव से शरीर नहीं छूटे और शरीर छूटने से पहले सात या आठ भव में मोक्ष हो जाता है जो समाधि मरण करता है इस बात पर ज्यादा ध्यान चला गया तो मोह ज्यादा हो जायेगा मोह ज्यादा होने पर उस जीव का कल्याण नहीं होगा। तो आचार्य आदिसागरजी महाराज का आज ५१ वां समाधि दिवस है आपने आचार्य आदिसागरजी महाराज का नाम अभी तक सुना नहीं था पर वे दक्षिण में ही उन्होंने दक्षिण के अन्दर ही विहार किया और दक्षिण में ही उन्होंने धर्म का प्रचार किया पर उत्तर भारत में आचार्य शान्ति सागर जी महाराज ने सोते हुये को जगा करके सब को मुनि धर्म का उपदेश दिया मुनि मार्ग को खोला इसलिए उनका नाम चलता आ रहा है। पर नाम किसी का भी चाहे आ० आदिसागर का हो शान्ति सागर का हो देशभूषण का हो या महावीर कीर्ति का हो पर नाम किसी का रहता नहीं है जो काम

करता है उसका नाम रहता है जो काम नहीं करता है उसका नाम ता घर वाले भी नहीं लेते हैं। तो आ० आदिसागर जी महाराज को दक्षिण के लोग जरूर जानते हैं। आ० आदिसागर जी महाराज को दक्षिण के लोग जरूरजानते हैं। आ० आदिसागर जी महाराज ने आचार्य महावीर कीर्ति जी महाराज ने मुनि दीक्षा दी थी और महावीर कीर्ति जी महाराज ने मुनि दीक्षा वीरसागर जी से ली थी। यह भी ध्यान होगा कि ये टांका टूका वाले महाराज बैठे हुये हैं इनको सब मालूम है, जब हम टांका टूका गये तब हमें मालूम पडा कि यहाँ पर आचार्य महावीर कीर्ति जी की क्षुल्लक दीक्षा हुई थी तो आचार्य आदि सागरजी महाराज ने उत्तर भारत में आकर के प्रचार नहीं किया पर दक्षिण भारत में उनका प्रचार बराबर रहा उस समय मुनि कम थे मुनियों को कोई जानता नहीं था। उत्तर भारत में आ० शान्तिसागरजी ने प्रचार किया।। आचार्य आदिसागर जी महाराज महानतपस्वी थे सात–सात दिन में आहार करते थे। मैंने ग्रन्थ में ऐसा देखा किउनके पेट में घटसर्प रोग था। खेलते हुये आये और माँ से पूछा कि मेरे को प्यास लगी है, छाछ कहाँ है माँ ने का कि हँडिया में रखी है, हँडिया के पास गये और छाछ समझकर चूने का पानी पी लिया जिससे उनके पेट में बैठा हुआ सर्पबाहर आ गया ऐसा ग्रन्थों में हमने पढा है पर ये कोई ऐसी बात नहीं कि आदिसागर बडे और शान्तिसागर छोटे हैं यह बस भेदभाव हमने डाल रखा है पर सिद्धों में कोई भेदभाव नहीं है एक सिद्ध में अनन्ताअनन्त सिद्ध समा जाते हैं उनकी अपनी सबकी सत्ता अलग–अलग है कोई छोटा नहीं कोई बडा नहीं है सबके सिर बराबर होते हैं पैर ऊपर नीचे हो सकते हैं पर सिर किसी का नीचा नहीं हो सकता है तो आदमी जन्म से महान नहीं बनता कर्म से महान बनता है जो कर्म करता है वह एक दिन भगवान् बन जाता है। शान्तिसागर ने लाल पैदा किये पर आचार्य आदिसागर ने ऐसा अनोखा लाल पैदा किया जिसने दक्षिण से लेकर पूरे उत्तर भारत में धर्म का डंका बजा दिया, वो लाल कौन थे ? वे आचार्य महावीर कीर्ति थे जो अपने गुरू के समान तपस्वी विद्वान, और १८ भाषा के जानकार थे उन्होंने धर्म का खूब प्रचार किया। आचार्य महावीर कीर्ति जी महाराज को हम भूल नहीं सकते पर आ० आदिसागर जी महाराज को देखा नहीं है जिनकी समाधि हुये ५१ साल हो गये पर हमारी उग्र ४६ वर्ष की तो हमने उनको देखा नहीं हमने जिसको देखा है हम तो उसी के गुणगान किया करते हैं। पर मैं आपसे प्रश्न करती हूँ कि आपने महावीर भगवान को नहीं देखा क्या उमको भगवान् नहीं मानना उनका गुणगान नहीं करना, उसी प्रकार जो ये कहता है कि मैंने आदिसागर को नहीं देख तो मैं नहीं मानता जो ऐसा कहता है वह भगवान्

महावीर को भी मानने वाला नहीं है वह महान मिथ्या दृष्टि है। मैं महावीर कीर्ति जी महाराज के दर्शन करने बडवानी गये तो बडवानी मं हम जब पहुँचे तो दोनों संघ अर्थात् गुरूऔर शिष्य आचार्य महावीर कीर्ति जी महाराज आचार्य विमल सागर जी महाराज वही पर गुरू और शिष्य का मेल हुआ था उस समय मैं छोटा सा था मेरी गृहस्थ अवस्था में दादी जी केसाथ में गया था तो महाराज ने देखते ही कहा कि यह बच्चा बडा होनहार है और यह २३ वें साल में यह बालक मुनि दीक्षा लेगा जैसा महावीर कीर्ति जी महाराज ने कहा था ठीक वैसा ही हुआ मेरा २३ वां वर्ष लगते ही मुनि दीक्षा हो गई। आचार्य महावीर कीर्ति जी १८भाषा के जानकार थे। गुरू गुड बन जाये तो चेला शक्कर ही रह जाता है ऐसी बात नहीं गुरू का नाम न हो पर चेले का नाम आवश्य हो सकता है ये पुण्य पाप का खेल है कोइ किसी के नाम को ठेस नहीं पहुँचा सकता है पर आचार्य आदिसागर जी महान तपस्वी हुये हैं दक्षिण के अंद उन्होंने धर्म का प्रचार किया पर आ० आदि सागरजी ने महावीर कीर्ति जी को दीक्षा दी और भी साधूओं को दीक्षा दी होगी हमने अभी कुछ किताबों में पढा आचार्य आदि सागरजी महाराज की समाधी हुये ५१ साल हो गये पर चारित्र चक्रवर्ती शान्तिसागरजी की समाधि हुये आज ३८ साल हो गये उन्होंने ३६ दिन का समाधि मरण किया ऐसे आचार्य आदिसागरजी आचार्य शांतिसागरजी धन्य है और आचार्य माहवीर कीर्ति जी धन्य है, जिन्होने समाधि सहित मरण मेहसाना में किया जिन्होंने समाधि मरण होने के ३ दिन पहले अपने शिष्य मुनि सन्मतिसागर जी को अपना आचार्य पद दिया था। जिनका आचार्य पद नहीं छूटता उनकी गति सुधर नहीं सकती, आचार्य पद छोडना ही पडता है मुनि बने बिगर गतिं सुधर नहीं सकती आचार्य पद छोडना ही पडता है मुनि बने बिगर मोक्ष की प्राप्ति होती नहीं है मुनिपद से ही कल्याण होता है बडा है और कौन छो टा है सब आत्मायें समान हैं , कोई कहने से बडा नहीं होता है बडा संयम से होता है अपने चारित्र से होता है वह अपने चारित्र से कल्याण कर सकता है दूसरा उसका कल्याण कभी नहीं कर सकता है हमने रागद्वेष की पिरणति रखी तो हमारा कल्याण नहीं हो सकता है हमको तो सबको मानना चाहिये।। हमें तो पीछी को देखकर बारम्बार नमस्कार करना चाहिये, हमको यह नहीं देखना चाहिये कि ये छोटा है या बडा है अगर ये भेदभाव जिसको हो गया फिर उसका कल्याण नहीं हो सकता, क्या छोटा दो टाईम खाता है क्या बडा एक टाइम खाता है नहीं सब की चार्य एक सी होता है, किसी का त्याग कम होता है। किसी का ज्यादा होता है इतनी तो भिन्नता मिल जायेगी पर खाते सब एक ही टाइम है लिखा है मुनि के ३२ ग्रास भोजन

के होते है और आर्यिका के २८ ग्रास भोजन के होते हैं। एक हजार चावल का एक ग्राम होता है। इतने ग्रासों में से भी कम खाते हैं ये सब कार्य क्यों करना? तो अपनी आत्मा को परमात्मा बनाने के लिए करते हैं परमात्मा बनने के लिये शरीर से ममत्व हटाना पडेगा, आपके सामने विराजमान है। आ० सन्मतिसागर जी महाराज जिन्होंनें अपने शरीर से ममत्व हटा रखा है हम तो इनके पैरों की धूली है इन्होंने अन्न त्याग कर रखा है हम अन्न का त्याग नहीं कर सकते हैं, हम कभी भी इनकी बराबरी नहीं कर सकते कोई कहें इनकी बराबरी कर लो बराबरी कैसे करें इनमें शक्ति हैं हमारे में इतनी शक्ति नहीं है कोई चाहे हाथी का बोझ गधे पर लाद दो तो गधा लाद के ले जायेगा हम तो गधे हैं ये हाथी हैं, ये बोझ को लाद सकते हैं हम बोझ नहीं लाद सकते हैं कयों इनमें त्याग की परिणती ज्यादा हैं इन्होंने रूपये का आधा सेर घी खाया है हमने रूपये का पाव भर भी नहीं खाया तो फर्क पड जाता है। जैसा जिसने माल खाया है उसकी शक्ति वैसी रहेगी। हम चाहे आचार्य आदिसागर की बराबरी करें आ० देशभूषण जी की बराबरी हम नहीं कर सकते हैं। हमारा सहना कम हो गया हमारी सहन शक्तिकम हो गई और आने वाले समय शक्ति और भी कम होगी इसलिए इनकी थी उन्होंने चारित्र चकवर्ती पद पाया उन्होंने आचार्य पद को पाकर के अपना कल्याण का रास्ता पकडा, हम भी उनके जैसा समाधि मरण करेंगें तो हमारा कल्याण हो सकता है, तो आज आदिसागरजी की ५१ वीं समाधि दिवस पुण्यतिथी है जिसको पुण्यतिथी कहते हैं वो समाधि दिवस होता है तो तुम समाधि सहित मरना चाहते होतो आज एक नियम कर केजाना क्या हम रात्रि को भोजन नहीं करेंगे, मंदिन रोज जायेंगे, पानी छना हुआ पीयेंगे इतना नियम अगर हमने ले लिया तो सोच लो हमारा समाधि दिवस मनाना सार्थक हो जायेगा। मैं कहता हूँ कि राजा न्याय करता है पर आज का राजा नहीं करता अन्याय करता है। पंच न्याय करते हैं अन्याय नहीं करते पर आज के पंच अन्याय करते हें महाराज कैसे अन्याय करते हैं ऐसा अन्याय करते हैं ये नशियां जी इसलिये बनी साधू को ठहरने के लिये और इस नसियां जी से पैसा बना रहे हें व्यापार हो गया, आप लोग ये नियम लेकर जाओ जब साधू आयेगा तब ये नसिया जी शादी के लिए नहीं देंगे। जो रात्रि को भोजन करेगा रात्रि को भोजन बनायेगा उसको हम नसिया जी नहीं देंगे, पर ऐसा नियम हम नहीं ले सकते क्योंकि हम तो अपने लडके की बारात को रात में ही जिमायेंगें फिर तुम केसे जैन हो फिर तुमने कोई की पुण्य तिथि मनाई कोई का समाधि दिवस मनाया। नम्बर दो का काम करते, माया जाल फैला रखा है और तुम कहते हो हम धर्मात्मा है कहाँ के धर्मात्मा हो तो बताओ कौन ? धर्मात्मा

धर्मात्मा वो है जो न्याय पूर्वक काम करता है जो अन्याय को छोडता है। जो साधूओं को एक मंच पर लाकर के बिठाने की कोशिश करता है साधू कभी नहीं लडते साधू को लडाने की कोशिश करते हें है सलावट की वह दीवार लडवाती है वह आड कर देती है वह ऐसा कहती है हमारे से कुछ और सन्मति सागर जी महाराज से कुछ तो लडाई हो जाती है अरे नहीं उस दीवार को हटाना है जब ही कल्याण होगा। इनमें कोई बडा और छोटा नहीं है सब अपने—अपने पद के अनुसार सब बराबर है कोई बडा छोटा नहीं हमारे लिए आचार्य आदिसागर जी आ० शान्तिसागर जी भी पूज्य है हमारे लिए आचार्य देशभूषण जी महाराज भी पूज्य है जितने भी आचार्य है वो हमारे लिए पूज्य है जो छोटे बडे का भेदे रखते है उसका कल्याण इस समय होने वाला नहीं है हमें तो सिद्धों को देखना है एक सिद्धमें अनन्ता अनन्त सिद्ध समा जाते हैं लेकिन सबकी सत्ता अपनी—अपनी अलग होती है ऐसा समझना पडेगा तभी हमारा कल्याण होगा तभी समाधि दिवस मनाना सार्थक होगा अगर हमने समाधि दिवस से कुछ शिक्षा नहीं लीतो हमारा समाधि दिवस मनाना सार्थक नहीं होगा और तुम्हारा कल्याण भी नहीं होगा क्योंकि हाथी के दांत खाने के कुछ होते हैं और दिखने के दूसरे होते हैं तब तुम ऐसे ही हो खाने के तो और दिखाते कुछ और हो, महाराज ऐसा कह रहे थे वह हमारे पास आये महाराज वो तुम्हारे पास यह कर रहे थे महाराज कह रहे हैं भैया मैं कहता हूँ ऐसा करने से तुम्हारा कल्याण नहीं होगा, अगर तुमको कल्याण करना है तो तुम्हें ये मनुष्य पर्याय मिली है तुमको समाधि दिवस मनाया है तो इस आड को इस दीवार को खत्म करना इसलिये हमें आचार्य आदि सागर जी महाराज की ५१ वीं समाधि दिवस पर आज ये नियम लेकर आयेगें कि जो रात्रि को भोजन बनाने वालों को नसियां नहीं देगें तभी आपका केशलोंच देखना समाधि दिवस मनाना सार्थक होगा। इस समाधि दिवस से कुछ न कुछ शिक्षा लेकर जाना चाहिये तभी हमारी व आपकी आत्मा का कलयाण होगा।

जय बोलो आचार्य आदि सागर जी महाराज की जय।।

आचार्य श्री १०८ आदिसागरजी महारजा का अर्घ

जल चंदन तन्दुल लेकर, पुष्पों की थाल भराई।

नैवज दीपक धूप मनोहर, फल वसु द्रव्य मिलाई।।

आदिसागर जी को जो पूजे, मनकरि बहुबहुलसाई।

इनके पूजत स्वर्ग मिलत है, शीघ्रवरे शिवदाई।।

ॐ ह्रीं श्री १०८ आचार्य श्री आदिसागरजी महाराज अर्घ निर्वपामीति स्वाहा

सामार —श्री पूज्य १०८ आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज के सुजानगढ (राजस्थान) चातुमार्स वी०नि०सं० २४८४ के शुभ अवसर पर श्री दिगम्बर जैन मुनि संघ प्रवंध कमेटी, सुजानगढ (राज०) द्वारा सप्रेम भेंट।

आचार्य श्री महावीर कीर्ति जी ने सं० १९८८ में, ३२ वर्ष की वयमें २८ मूलगुण सहित ऊदगाँव (दक्षिण भारत) में १०८ आचार्य श्री आदिसागर जी से परम दिगम्बरी अंतरंग और वहिरंग परिग्रहरहित मुनि दीक्षा धारण की थी।

आचार्य श्री, परम पूज्य गुरुवर्प १०८ श्री आदिसागरजी महाराज के स्वर्गारोहण के पश्चात् शेडवाल(वेलगाँव)में, अनेक राजा, महाराजा, जागीरदार, दिगम्बर मर्दानराज, ऐलक, छुल्लक आदि एक लाख जन समूह के समक्ष आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए थे।

साभार — कुछ अभ्यास की पंक्तियाँ
सेठ एस०एस०कासलीवाल
टेक्सटायल टैकोनोजोजिस्ट
९९ मेरिन डाइव बंबई ४००००२
१८ जुलाई १९७५

आपने अपनी अंतिम वंदना के समय पार्श्वनाथ टोंक पर सदैव के लिए घृततेल का जीवन पर्यंत के लिए त्याग कर दिया। सं० १६६१ में घर पर जाकर आपने आजीवन एक बार भोजन का नियम लेलिया। जब आपकी अवस्था ३७ वर्ष की हुई तब आपने ४ वर्ष तक एक दिन के बाद, आहार का नियम ले लिया। सं० १६७० में आपने मुनि देवेंद्र कीर्ति जी से क्षुल्लक के व्रत ग्रहण किये। सं० १६७४ में कुंभोज बाहुवलि पर मुनि आदिसागर जी से ऐलक दीक्षा ली। सं०. १६७६ में मुनिराज पाय सागर जी महाराज से आपने मुनि दीक्षा ले ली। उस समय आपका नाम शांतिसागर रखा गया।,

(आचार्य रत्न श्री देश भूषण जी महाराज का पावन चरित्र लेखक—वलभद्र जैन संपादक दिव्यध्वनि मासिक), मगशिर शुक्करवीर सं० २४९३ दिनांक १४ दिसम्बर १६६६ द्रव्यदाता गुरूभक्त श्री लक्ष्मीनारायण पंसारी जयपुर धर्म पत्नि सा० महताव देवी ने इस पुस्तक के प्रकाशन का सारा व्यय दिया।

आचार्य शांतिसागरजी

जन्म १६२६

आषाढ बुदी ६ स० १६२८ जैन गजट १८—३—५६

(१) १९२८ भगवान महावीर और उनका तत्व दर्शन

(२) दिगम्बरत्व और दिगम्बी मुनि

(३) चा०च० १९२९

मुनि दीक्षा

स० १६७७ मुनि सिद्ध सागर जैन गजट

स० १६७६ देवेन्द्र कीर्ति यरनाल चा०च०

स० १६७७ सिद्धसागर यरनाल श्रेयोमार्ग

स० १६७६ पाय सागर यरनाल जी० च०आ०शा०

आदिसागर यरनाल वृ०जि०सं०

पाय सागर वृ०जि०सं०

क्षुल्लक दीक्षा

सं० १६७७ मुनि सिद्धसागर जैन गजट

स० १६७२ स० सम १०१५ शक। देवेन्द्र कीर्ति यरनाल में चा०च०

स० १६७० " श्रेयोमार्ग

स० १६६६ " उत्तर में भ० म० तत्व दर्शन दि० दि० मु०

ऐलक दीक्षा

सं० १६७४ आ० आदिसागर अंकलीकर जी कु० वा० प०.

सं० १६७४ आ० आदिसागर अंकलीकर जी० च० आ० शांति

सं० १६७३ आ० आदिसागर अंकलीकर कु० वा० प० वृ० जि० संग्रह

सं० १६७३ आ० आदिसागर अंकलीकर भ० म० तत्व दर्शन

आचार्य शांति सागर दर्पण

आषाढ कष्णा ६ स० १६२६ भोज जन्म

स० १६७० क्षुल्लक देवेन्द्र कीर्ति

स० १६७४ क० वा० प० ऐलक आ० आदिसागर अंकलीकर

फागन सुदी १३ स० १६७६ यरनाल मुनि० पायसागर

(जीवन चरित्र श्री आचार्य शांति सागर जी महाराज)

उत्तुर सु० देवेन्द्र कीर्ति मुनि

कु०वा०ष० ऐलक आ० आदिसागरजी यरनाल सं० पायसागर मुनि

वृहद जिनवाणी संग्रह

स० १६२८ भोज जन्म

स० १६६६ उत्तुर क्षु० देवेन्द्र कीर्ति

स० १६७६ कु० वा० प० आ० आदिसागर अंकलीकर

स० १६७६ यरनाल मु० आदिसागर भोसलें

भगवान महावीर और उनका तत्व दर्शन

आसाढ बदी ६ स० १६२६ जन्म

जेठ सुदी १३ स० १६७० क्षु० देवेन्द्र कीर्ति

स० १६७७ यरनाल मु० सिद्धसागर श्रेयोमार्ग मु० परिचय अंक १६६४

आसाढ बुदी ६ स० १६२६ जन्म

स० १६७० क्षु० सिद्धसागर

स० १६७७ मु० सिद्धसागर

(जैन गजट १६५६ मार्च १८)

आषाढ बुदी ६ सं० १६२६ जन्म येलगुल

जेष्ठ शुक्ल १३ सं० १६७२ क्षु० उत्तुर देवेन्द्र कीर्ति

१६७६ देवेन्द्र कीर्ति आदिसागर (भोसकेर) चा०च०

दर्पण

आ० आदिसागर महाराज अंकलीकर

भादो सुदी ४ सन १६३९ जन्म

मगंसर सुदी २ सन १८८४ मुनि दीक्षा

जेष्ठ सुदी ५ सन १६१५ आचार्य पद

फागुन बुदी १३ सन १६४४ समाधि

आ० म० कीर्ति

बैसाग बदी ६ सन १६१० जन्म

फागुनी सुदी ११ सन १६४३ मुनिदीक्षा

फागुन बुदी १३ सन १६४४ आचार्य पद

माघ बुदी ६ सन १६७२ समाधि

आ० विमल सागर जी

आश्वानी बदी ७ सन १६१६ जन्म

फागुन सुदी १३ सन १६५२ मुनिदीक्षा

मंगसर बुदी २ सन १६६१ आचार्य पद

आ० सन्मति सागर जी

माघ सुदी ७ सन १६३८ जन्म

फा० सुदी १२ सन १६६३ मुनिदीक्षा

माघ बुदी ३ सन १६४२ आचार्य पद

गणिनी आर्मिका विजयमति माताजी

जन्म वैसाख सुदी १२ १६२८

आ० दीक्षा चैत्र बुदी ३ सन १६६२

ग० पद माघ बुदी ३ सन १६७२